

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_I 182460

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H82
D48 B

Accession No. G.H. 2796

Author देवराज "दिनेश"

Title बरगद की छाया १९६१

This book should be returned on or before the date
last marked below.

सत्साहित्य-प्रकाशन

बरगद की छाया

—मौलिक एकांकियों का संग्रह—

देवराज 'बिनेश'



पुस्तक भेंट के निमित्त है

१९६१

सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली

प्रकाशक

मार्तण्ड उपाध्याय,

मंत्री, सस्ता साहित्य मण्डल

नई दिल्ली

पहली बार : १९६१

मूल्य

अढ़ाई रुपये

मुद्रक

हीरा आर्ट प्रेस

दिल्ली

प्रकाशकीय

इस पुस्तक में लेखक के चुने हुए एकांकी नाटकों का संग्रह किया गया है। ये नाटक ऐसे विषयों पर लिखे गये हैं, जिनका हमारे निजी एवं सामाजिक जीवन के साथ निकट का संबंध आता है। बिना प्रेम, त्याग, पारस्परिक सहयोग, श्रम, कर्तव्य-पालन आदि के हमारा समाज और राष्ट्र आगे नहीं बढ़ सकते।

ये नाटक इन तथा ऐसे ही विषयों पर आधारित हैं। इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनके पढ़ने में तो आनंद आता ही है, साथ ही इन्हें मंच पर भी आसानी से, बिना अधिक खर्च के, खेला जा सकता है। इन नाटकों की शैली और भाषा इस प्रकार की है कि सामान्य शिक्षित पाठक भी इनसे लाभ उठा सकते हैं।

आशा है, इस पुस्तक का हिन्दी-जगत में स्वागत होगा और यह अधिक-से-अधिक पाठकों द्वारा पढ़ी जायगी।

—मंत्री

एकांकी-सूची

१. बरगद की छाया	१
२. अग्रदूत	२६
३. सबसे बड़ी जीत	४५
४. मिट्टी और सोना	७२
५. मेल-मिलाप	६५
६. हमारा कर्तव्य	१२१
७. सपनों के बहाने	१४६



बरगद की छाया

: १ :

बरगद की छाया

पात्र

विक्रमदेव	: एक जमींदार
राकेश	} दो अवेड़ उम्र के व्यक्ति
जीवन	
दुःशासन	: स्कूल-मास्टर
मुखिया	: माधोदास
चरणदास	: मुखिया
धरनीधर	: गांव के पुरोहित
चन्दनसिंह	: पहलवान
बालक	} अन्य पात्र
रामू	
रघुवर	

[गांव की एक चौपाल के बाहर का लम्बा-चौड़ा चबूतरा, जिसपर एक तख्त पड़ा है । नीचे चटाइयां बिछी हुई हैं । जीवन और राकेश का बातें करते हुए आना]

राकेश : दादा, यह हवेली बनकर बहुत अच्छी तैयार हुई है । कितनी बड़ी बैठक है, कितना बड़ा चबूतरा है । यहां पंचायत और गांववालों की ब्याह-शादियां अच्छी तरह

से हो सकती है। बस कमी है तो एक बात की...
जीवन : क्या ?

राकेश : (मंच से नीचे की ओर इशारा करके) यहां एक
बरगद का पेड़ लगाना चाहिए, जिसकी शीतल छाया में
हम सब सुख-चैन से बैठ सकें, आराम कर सकें।

जीवन : क्या कहा ! बरगद का पेड़ ! बरगद की छाया !
(फीकी हँसी) बरगद की छाया बड़े भाग्य से मिलती है,
भैया ! अपने-आपको इन्सान कहना आमान है, पर
इन्सान बनना बड़ा मुश्किल है।

राकेश : बरगद की बात करते-करते आप तो इन्सान की बात
करने लग गये, दादा ! आखिर आप कहना क्या चाहते हैं ?

जीवन : मैं जिस बरगद की छांह में पला हूँ, राकेश, वैसा
बरगद कहीं नहीं मिल सकता ! वैसा बरगद बन सको
तो सारे गांव को बड़ी शीतल छाया मिल सकती है,
स्नेहमयी छाया।

राकेश : आप तो रहस्यमयी बात कह रहे हैं, जीवन दादा !

जीवन : नहीं, कोई रहस्यमयी बात नहीं। सच्चे-सीधे जीवन
की कहानी है। सुनना चाहो तो सुना सकता हूँ। उस
बरगद के साथ काटे हुए जीवन का एक-एक दृश्य मेरी
आंखों के सामने घूमने लगा है। बात आज से
कोई दस-बारह साल पहले की है। मैं जिस आदमी की कहा-
नी कहने जा रहा हूँ, वह इस दुनिया में हैं या नहीं, मैं नहीं
जानता, किन्तु यह जानता हूँ कि उनके यश की गाथा

आज भी सबके दिलों पर अंकित है। उनका नाम था विक्रमदेव ! वह जमींदार थे, लम्बा चौड़ा शरीर, छाती तक लहराती सफेद दाढ़ी। लोग उन्हें भीष्म पितामह कहते। साठ बरस की उम्र में भी साढ़े तीन मन के मुगदर बड़ी आसानी से घुमा लेते।

राकेश : साढ़े तीन मन के !

जीवन : हां, साढ़े तीन मन के। पच्चीस गांवों के मालिक। जाति के ब्राह्मण। बौहरे कहलाते। अपनी रियाया पर असीम प्रेम। ऊपर से वज्र की तरह कठोर, पर हृदय के मखन। बालक की तरह सरल। गांववाले अनुभव करते, उनपर पिता की छाया है। बरगद की छाया की तरह घनी। वह सचमुच वट-वृक्ष ही थे। सन्तान के नाम पर एक पुत्री थी। उसका विवाह करके वह निश्चिन्त हो चुके थे। पुत्र न होने का उन्हें कोई दुःख न था। सच बात यह है कि पुत्र के विषय में सोचने का उन्हें अवकाश ही कहां था ! गांववालों के भगड़े सुलभाने में लगे रहते थे। पढ़े-लिखे विद्वान ब्राह्मण थे। सधे हुए शिकारी। बात कम करते। जरूरत पड़ने पर ही मुंह खोलते। उनके स्वभाव में कई विचित्र बातों का मेल था। दंगल कराने और घोड़े पालने का उन्हें बहुत शौक था। एक दिन शाम को उनके सामने से एक बालक रोता हुआ गुजरा।

[कहते हुए जीवन और राकेश एक ओर चले जाते हैं।]

मंच की दूसरी ओर से एक बालक रोता हुआ आता है ।
दूसरी ओर से विक्रमदेव और जीवन आते हैं ।]

विक्रम : क्यों रोता है ? किसका बालक है ?

जीवन : भीमा धीवर का है, बापू ।

विक्रम : पर रोता क्यों है ? इसे चुप कराओ । बच्चे रोने के लिए नहीं, हँसने-खेलने और खिलने के लिए होते हैं ।
(पुचकारते हुए) चुप हो जा, बेटा । बता, क्या बात है ?
क्यों रोता है ? किमने मारा है, तुम्हे ? तेरे बाप ने ?

बालक : नहीं, बाप ने नहीं मारा ।

विक्रम : मां ने ?

बालक : नहीं, मां ने भी नहीं ।

विक्रम : तो फिर किसने मारा है ?

बालक : मास्टरजी ने ।

विक्रम : मास्टरजी ने ? क्यों, किस बात पर ? पढ़ता नहीं होगा, ठीक ढंग से ? क्यों ठीक है न ?

बालक : नहीं, यह बात नहीं है, बापू । परसों मैंने घर से ले जाकर फीस उन्हें दे दी । पर आज फिर मांगने लगे । मैंने कहा—मैंने तो परसों फीस के पैसे दे दिये थे । बस, यह सुनते ही लगे पीटने । बोले, नहीं दिये । जाओ, घर जाकर कहना, पैसे गुम हो गये हैं । और दो ।

विक्रम : हूं, यह बात है । बड़ा बेरहम आदमी दीखता है ।
(माथा छुते हुए) देखो तो, कैसी कनपटी सुजा दी है ।
जीवन, अस्तबल से हमारी सफेदा लाओ । अरे, जा जल्दी

कर !

जीवन : सफेदा तो चरने गई है, बापू । लोटन है, उसे ले आऊं ?

विक्रम : हां जा ! लोटन को ही ले आ ।

जीवन : क्या आप गांव से बाहर जायेंगे ? यहां तो रात को पंचायत बैठनेवाली है ।

विक्रम : तबतक लौट आऊंगा । जा, जल्दी से ला । (जीवन जाता है) क्यों रे, क्या नाम है तेरे मास्टर का ?

बालक : दुःशामन ।

विक्रम : (क्रोध से) दुःशामन ! समझा । इस नाम के कारण ही यह आदमी इतना क्रूर है ।

जीवन : (आते हुए) यह लो बाबा, घोड़ा आ गया ।

विक्रम : आ बेटा । अरे जीवन, इसे उठाकर जरा घोड़े पर बिठा दीजिओ । और सुन, इस बालक के घर भी कह दीजियो कि बापू के साथ गया है ।

[मंच पर अन्धेरा छा जाता है । नैपथ्य में घोड़े की टापें उभरती हैं । प्रकाश होने पर गांव के लोग बैठे बातें कर रहे हैं, हुक्का पी रहे हैं, तभी विक्रमदेव आते हैं । बालक साथ है । गांववाले उठकर खड़े हो जाते हैं ।]

विक्रम : जै गम जी की ।

मुखिया : बड़े भाग जो इधर की सुध ली । अरे, कलवा, भीतर से दरी लाकर खाट पर बिछा ।

विक्रम : नहीं, ज्यादा देर नहीं बैठना है । गांव जल्दी ही लौटना है । वहां पंचायत होनेवाली है

मुखिया : अब आये हो तो थोड़ी देर तो बैठना ही पड़ेगा, बापू । दूध पिये बिना थोड़े ही जाने देंगे हम ।

विक्रम : कोई जरूरत नहीं, पर जिद्द करते हो तो पी लेंगे, थोड़ा-सा दूध । पर पहले दुःशासन पण्डित को बुलाकर लाओ ।

दुःशासन : मैं यहीं हूं, बापू । मेरा ही नाम दुःशासन है ।

विक्रम : हूं ! देखने-सुनने में तो बुरे नहीं लगते । (गुस्से से) तुम्हीं पढ़ाते हो इन बच्चों को ?

दुःशासन : जी हां ।

विक्रम : इन्हें पढ़ाने के लिए तुम्हें रक्खा है या पीटने के लिए ? (प्यार से) माली बनो, जंगली बेल नही । पौधों को पनपाओ, उखाड़ो नहीं । सुनो, इसने तुम्हें फीम लाकर दी थी कि नहीं ?

दुःशासन : (चुप रहता है)

विक्रम : ठीक है, मैं समझ गया । देखो कभी कुछ जरूरत हो तो मेरे पास आ जाया करो । अभी तो जिन्दा हूं, भगवान की कृपा से । तुम्हारी सब मुसीबतों में साथ दूंगा । और सुनो ।

दुःशासन : जी बापू !

विक्रम : मैं जानता हूं, तुम बुरे नहीं हो, पर एक दिन हो जरूर जाओगे । यह सब तुम्हारे नाम का असर है । रावण, कुम्भकरण, कंस, दुर्योधन और दुःशासन ! भला ये भी कोई भले आदमियों के रखने के नाम हैं ! दुर्योधन

और दुःशासन के असली नाम सुयोधन और सुशासन थे। पर बुरे काम करते देख लोगों ने उनके नाम दुर्योधन और दुःशासन रख दिये। जल्दी बदलो इस नाम को (सोचते हुए) अच्छा, यह समझो कि अर्जुन हुआ आज से तुम्हारा नाम। मुखियाजी...

मुखिया : आज्ञा करो, बापू।

विक्रम : आज्ञा क्या करनी है, मुखियाजी। यह लो पांच रुपये। कल पाठशाला और गांव के लड़कों में पण्डितजी का नाम बदले जाने की खुशी में मिठाई बांट देना। क्यों भाई अर्जुन, तुमने नाम बदले जाने का बुरा तो नहीं माना ?

दुःशासन : नहीं बापू, आपकी आज्ञा मिर-माथे पर।

विक्रम : जियो बेटा! हमारा यह पक्का विश्वास है कि नाम का असर आदमी के काम पर जरूर पड़ता है। अब हमींको लो। अगर हमारा नाम विक्रम न होता तो क्या साठ साल की उम्र में साढ़े तीन मन के मुगदर घुमा लेते ? यह देखो, तुम्हारे सामने इस गांव के साहूकार भिखारी-दास बैठे हैं। चालीस की उम्र में मत्तर के लगते हैं। हजारों रुपये धरती में गढ़े होंगे। पर यह नहीं कि उन्हे उखाड़कर कुछ खायें-पियें, मोटे-ताजे बनें। नाम का असर है। भिखारी नाम है, भिखारी की-सी जिन्दगी काटेंगे। पहले तो दास शब्द से ही मुझे चिढ़ है। पर चलो, अगर दास बनना ही है तो किसी अच्छे का बनो।

भला भिखारी का दास बनकर क्या सुख पाओगे !
 (सब हँसते हैं) हँसने की बात नहीं है, भाई । यह सोचने
 की बात है । मैं तो कहता हूँ, मुखियाजी, सब गांवों में नाम
 बदलने का यज्ञ होना चाहिए । घूरेमल, कूड़ाराम, डंगर-
 चंद इस तरह के सब नाम बदल देने चाहिए ।

मुखिया : ऐसा ही होगा, बापू ! और उसपर मिठाई आपकी
 ओर से बांटी जायगी ।

विक्रम : भला यह भी कोई पूछने की बात है । अच्छा, अब हम
 चलेंगे ।

मुखिया : पर जाने से पहले दूध का एक गिलास तो पीते
 जाओ, बापू । ला रे, दूध इधर ला ।

विक्रम : हूँ ! यह तो हमारे लिए हुआ और हमारे इस नन्हे
 साथी के लिए ! क्या इसे दूध पीना नहीं आता ।

मुखिया : (घबराकर) अरे हाँ । (बात बदलकर) इसके लिए
 कुम्हार के घर से कुल्हड़ मंगवाया है । यह धीमर है ।

विक्रम : ठीक ! और इसका जूठा बर्तन तुम्हारे घर में कोई
 नहीं मांजेगा ! अच्छी बात है । जल्दी से एक गिलास
 दूध और मंगवाओ । हम इसके जूठे गिलास को मांज
 देंगे । ब्राह्मण के हाथ से मंजने पर गिलास शुद्ध हो
 जायगा । जल्दी करो, मैं जानता हूँ, तुमने कुम्हार के घर
 से कुल्हड़ मंगवाने का बहाना बनाया है । सोचा होगा,
 बापू दूध पीकर चले जायेंगे, इसकी ओर ध्यान भी नहीं
 देंगे । पर मैं दूध पीऊँ और बाल-गोपाल मुंह देखें, यह

कैसे हो सकता है। असल में दूध की तो इनको जरूरत है। (अपना गिलास उसकी ओर बढ़ाते हुए) ले रे, पी, जल्दी पी। गांव पहुंचना है (बच्चा दूध पीने लगता है) भगवान की और बच्चे की कोई जात-बिरादरी नहीं होती। लाओ, एक लोटा पानी ले आओ। गिलास मांज दू।

मुखिया : भूल हो गई, बापू। हमें माफ कर दो।

विक्रम : नहीं मैं कोई नागज थोड़ा ही हूं, भाई। (बच्चे से) क्यों दूध पी लिया रे ?

बालक : हां, पी लिया।

विक्रम : सबरे का भूखा दीखता था, कमबख्त। ला गिलास इधर दे।

मुखिया : यह काम हम आपको नहीं करने देंगे, बापू। भले-बुरे जब सबके जिम्मेदार आप हैं तो हमें जात-बिरादरी की कोई चिन्ता नहीं है। लीजिये, अब आप भी पीजिये।

विक्रम : (दूध पीकर चलते हुए) अच्छा मुखियाजी, नाम-यज्ञ जरूर होगा। और सुनो। मैं बिना दक्षिणा ही पुरोहित का काम कर दूंगा। मुझसे अधिक पढ़ा-लिखा ब्राह्मण भी इस इलाके में कोई नहीं मिलेगा।

[फिर रंगमंच पर अन्धकार छा जाता है। प्रकाश आने पर गांव की पंचायत का शेर 'जैराम जी की, बापू' 'पालागन, बौरेजी' की आवाजें]

विक्रम : जै राम जी की, पंचों। जै राम जी की, भाइयो। मुझे

कुछ देर हो गई, पर जिस काम के लिए गया था, वह भी जरूरी था। मैंने सोचा, आज का काम आज ही कर डालूँ। कल पर छोड़ा तो गया। मेरा विचार है कि अब पंचायत का काम शुरू किया जाय। सुना है, बहुत-से मामले सुलझाने पड़ेंगे आज।

जीवन : हाँ, बापू। काम की सूची बहुत लम्बी है।

विक्रम : चलो, कोई बात नहीं। काम शुरू करो। हाँ, तो मुखिया चरणदाम ! पहला मामला पंचायत के सामने रखो।

चरण : पहला मामला तो रधिया और बिरजू का है, बापू। आपके पास इसकी कहानी तो पहुंची होगी।

विक्रम : गांव में कोई बात हो और मुझे पता न लगे, यह भला कैसे हो सकता है। यह मैं मानता हूँ, जो हुआ सो बहुत बुरा हुआ। पर फिर भी इस बात का फैसला बहुत सोच-समझकर करना होगा। बिरजू का हुक्का-पानी छोड़ देने और गांव से बाहर निकाल देने से भी यह समस्या हल नहीं होगी।

चरण : पर रधिया के बाप गोपालदास का तो यह कहना है कि मैं अदालत में जाऊंगा और बिरजू को कैद कराये बिना चैन नहीं लूंगा।

विक्रम : पागल हुआ है, जग-हँसाई करायेंगा। खुद तो बदनाम होगा ही, लड़की की जिन्दगी खराब होगी सो अलग। फिर हम पंचों के होते हुए लोग कचहरी जायं,

इससे अधिक हम लोगों की और क्या बेइज्जती हो सकती है। कहां है गोपालदाम ?

जीवन : वह यहां नहीं आये। वह तो बेचारे शरम के मारे घर से ही नहीं निकले। विधवा बेटा ने उनके मुंह पर कालिख पोत दी है, बापू। वह घग्घैटे अपनी किस्मत को कोस रहे हैं।

विक्रम : अरे, जो हुआ सो हुआ। भला-बुरा हरेक के साथ ही लगा रहता है। जा रे जीवन, गोपाल से कह तुम्हें बापू बुला रहे हैं। (जीवन जाता है) वैसे, चरणदाम, तुम लोगों ने इस मामले में क्या सोचा है ?

चरण : हम सबने तो यही सोचा है, बापू, कि बिरजू इस गांव को छोड़कर चला जाय। यहां रहेगा तो और गन्दगी फैलायेगा। गांव की बहू-बेटियों की इज्जत का सवाल है।

विक्रम : बात वह कहो, मुखियाजी, जो किमीकी समझ में आये। बेसिर-पैर की मत हांको। तुम्हारा मतलब है, जहां जायगा, वहां बहू-बेटियां नहीं होंगी। वहां यह गंदगी नहीं फैलायेगा। बाहर जाकर वह पूरे गांव को बदनाम करेगा। फिर किमीको उसके घर से निकालना इतना आसान भी नहीं है। साथ ही आप लोग यह भी न भूलें कि ताली एक हाथ से नहीं, दोनों हाथों से बजती है। मैं तो कहता हूं कि इसे जंजीर से जकड़ दो। इसका बस यही एक इलाज है।

चरण : पर इस आवारा को अपनी लड़की कौन देगा, बापू ?

विक्रम : और कौन देगा, वही देगा, जिसने पहले अपनी बेटी पर कड़ी नजर नहीं रखी। मैं कहता हूं, इसका और रंधिया का विवाह होना चाहिए।

[शोर मचता है “नहीं-नहीं, यह नामुमकिन है।”]

चरण : यह बात तो नामुमकिन है, बापू।

विक्रम : पंचायत फैसला करे तो कुछ भी नामुमकिन नहीं है। किसी गरीब की बेटी को मीठी-मीठी बातों से बहका-फुसला लेना मुमकिन है और मुसीबत पड़ने पर जिन्दगी में उसका साथ देना नामुमकिन है। भला यह कहाँ की इन्सानियत हुई ?

धरनीधर : इन्सानियत की बात इसमें क्या है, बौरेजी ? आप तो जानते ही हैं कि हम जाति के ब्राह्मण हैं। अब आप ही बताइये कि ब्राह्मण का लड़का बनिये की लड़की से कैसे ब्याह कर सकता है ? एक तो जाति के बाहर, फिर विधवा लड़की ! इतना तो मुझपर अत्याचार न करो।

विक्रम : यह तो तेरे लड़के को भी मालूम होगा कि वह ब्राह्मण है और लड़की बनिये की है। वह अन्धा तो नहीं था, कानों से भी ऊंचा नहीं सुनता था। फिर इसमें किसका दोष है ? (गरजकर) क्यों रे बिरजू, महादेव की पिंडी पर हाथ धरके कसम खा कि तूने रंधिया को ब्याह का भांसा दिया था या नहीं। (रुककर) क्यों बोलता क्यों नहीं ? अब क्यों बिजली गिर गई मिर पर ? कहो, धरनीधर ! अब क्या जवाब देते हो।

धरनी : (ऊँचे) अरे, इस विरजू ने तो खानदान की नाक ही कटवा डाली है। (रोते हुए) तुम जो चाहो सो कर सकते हो, बौरेजी। पर मेरी बिरादरी तो मुझे जिन्दा नहीं छोड़ेगी। कोई मेरे साथ हुक्का-पानी नहीं पियेगा।

विक्रम : और कोई पिये, न पिये, मैं पियूंगा। मैं तो तेरी जाति का ही हूँ न। अब बोल क्या कहता है ?

धरनी : (रोते हुए) मुझपर रहम करो, बौरेजी।

विक्रम : तुझपर रहम करूँ और उस छोकरी से कह दूँ कि तू आत्म-हत्या कर ले ! क्यों, है न यही बात ! जो करेगा सो भरेगा, पण्डित। यह तो कुदरत का नियम है।

धरनी : (गुस्से से) पंचायत जब यही फैसला करने बैठी है तो करे। पर मैं बनाये देता हूँ कि विरजू मेरे घर पर नहीं रहेगा।

विक्रम : कोई बात नहीं, मेरे घर रह लेगा। चलो, अच्छा है। बेटे और बहू के आने पर मेरे घर पर भी रौनक हो जायगी। हाँ, तो बोलो, इस बात का कौन विरोध करता है ! नामुमकिन कहनेवाले अपने दिल माफ करके इस बात का जवाब दें। (रुककर) कोई नहीं बोलता। कहो पंचों, अब आप लोगों की क्या राय है। (हलका कोलाहल)

चरण : सब आपके साथ हैं, बापू। पर पहले गोपालदाम से भी पूछ लिया होता।

विक्रम : उसकी जिम्मेदारी मुझपर छोड़ो। मैं उससे बात

कर चुका हूँ । मैं बड़ी मुश्किल से उसे मना पाया हूँ ।

चरण : सब पंचों की राय से यही फैसला हुआ है कि बिरजू और रधिया का ब्याह हो जाय ।

[“हमें मंजूर है, हमें मंजूर है” की आवाजें]

विक्रम : और इस शुभ काम के साथ ही आज की पंचायत की समाप्ति होती है । बाकी फैसले कल होंगे ।

[लोग बाहर जाते हैं । रंगमंच पर अंधकार छा जाता है ।

जीवन और राकेश बातें करते हुए आते हैं ।]

जीवन : इस तरह की अनेक घटनाएँ उनके जीवन के साथ जुड़ी हुई हैं । वह स्वयं पुरातनपंथी थे, पर दूसरों के लिए अपनी चिन्ता नहीं करते थे । बिरजू और रधिया को अलग से बुलाकर उन्होंने उनकी इच्छा पहले से ही जान ली थी । गांव का हर छोटा-बड़ा यह समझता था, मानो वह अपने हमदर्द से, अपने सगे से बात कर रहा हो ।

राकेश : वास्तव में वह बहुत सुलभे हुए व्यक्ति थे ।

जीवन : उन्हें धुन थी कि गांव के लड़कों की सेहत बने, उनमें कसरत का शौक पैदा हो । यह सोचकर उन्होंने अपनी बगिया में एक अखाड़ा बनवाया । कसरत के सब तरह के सामान मंगवाकर रखे । काफी दूर से एक नामी पहलवान बुलाकर गांव में बसाया, ताकि वह गांव के लड़कों को दांव-पेंच सिखाये । गाहे-बगाहे इस उमर में भी खुद अखाड़े में उतरकर कुश्ती करते । भले के लिए किया

था, पर परिणाम बुरा निकलने लगा । एक दिन की बात है ।

[जीवन और राकेश जाते हैं । दूसरी ओर से विक्रमदेव आते हैं । उसी समय घास का गट्ठर लिये हुए मुखियाजी आते हैं ।]

विक्रम : (ऊँचे स्वर में) घर में लड़के-बाले ठीक-ठाक हैं न ; जो यह दो मन घास का गट्ठर लादे लिये जा रहे हो ?

चरण : इसका उत्तर तो अपने-आपसे पूछो (गट्ठर नीचे फेंकता है)

विक्रम : क्यों, क्या बात हुई ? अरे जीवन, यहा आ ।

जीवन : (आते हुए) आया, बापू । यह लीजिये, हुक्का ताजा कर लाया हूं ।

विक्रम : अरे, मुखियाजी के लिए पानी ला । और सुन पण्ड-ताइन से कहना, मुखियाजी आये हैं । कुछ खाने को भी भेजें ।

चरण : इसकी कोई जरूरत नहीं है, भैया ।

विक्रम : तुम्हें जरूरत नहीं, हमें तो है । जा रे, जीवन, जल्दी कर (जीवन जाता है) लो पहले हुक्के में दम लगाओ । फिर बताओ, आखिर मामला क्या है । क्या तुम्हारे लड़कों को शर्म नहीं आई, जो इस उम्र में यह दो मन का गट्ठर तुम्हारे सिर पर लाद दिया ?

चरण : इस पहलवान को गांव में लाकर तुमने बुरा किया है ।

विक्रम : क्यों, क्या बात हुई ?

चरण : बगिया में मारा दिन निठल्ला बैठा ऊल-जलूल किस्से-कहानियां सुनाता रहता है । चौपड़ खेलता रहता है । गांव के किमी भी बड़े-बूढ़े से सीधे मुंह बात नहीं करता । लड़के निकम्मे और आलसी हो चले हैं, मारा दिन उसके साथ बैठे चरस पीते रहते हैं ।

विक्रम : (गुस्से से) क्या कहा ! गांव के लड़के चरस पीने लग गये हैं ! पर मुझे तो आज तक किमीने नहीं बताया ।

चरण : आज मैं जो बता रहा हूँ । इस उमर में खुद बैलों के लिए घास उठाकर ला रहा हूँ । जवान बेटे भांग और चरस के नशे में पड़े हैं और बूढ़ा बाप हड्डियां रगड़ रहा है । मेरी ही नहीं, गांव के सब लोगों की यही दशा होगी ।

विक्रम : यह तो सचमुच बुरा हो रहा है । कैसा जमाना आ गया है ! लखू पहलवान के अखाड़े में पहलवानी तो हमने भी बहुत की थी, पर ऐसी नौबत तो कभी नहीं आई ।
(ऊंचे स्वर में) जीवन, ओ जीवन ।

जीवन : (बाहर से) आया बापू ! (पास आकर) क्या बात है बापू ?

विक्रम : यह सामान तख्त पर रख दे और बगिया में जाकर चन्दनसिंह पहलवान को बुला ला । कहना बापू ने अभी बुलाया है ।

जीवन : पर पहलवान तो जुम्मन तेली की बैठक में बैठे चौपड़ खेल रहे हैं। (व्यंग्य) उनके सब पट्टे भी उनके साथ हैं।

विक्रम : बुलाओ, उन सबको। कहना, बापू ने बुला रहे हैं।
(जीवन जाता है) लो, तुम तो कुछ खाओ पियो, मुखिया।
कम्बख्त एक मछली मारे तालाब को गंदा कर देती है।
चिन्ता मत करो। मैं अभी सब ठीक किये देता हूँ। मैं सब सिखा लूंगा, लड़कों को। मुझसे अच्छे दांव-पेंच कौन सिखावेगा। भीष्म पितामह युद्ध-कला के सबसे अच्छे जाना थे। वह कौरव-पाण्डवों को सबकुछ सिखा सकते थे। फिर भी वह द्रोणाचार्य को इसलिए लाये थे कि बच्चों को एक गुरु चाहिए। पर जब गुरु ही निकम्मा हो तो चेले क्या निकलेंगे। मैंने सोचा था, मुखिया, चन्दन-सिंह नाम है तो थोड़ी-बहुत खुशबू तो होगी ही। बस नाम से ही धोखा खा गया था।

चन्दन : (आते हुए) जै रामजी की, वीरे !

विक्रम : जै रामजी की !

चन्दन : कहिये, क्या आज्ञा है ?

विक्रम : अभी बताता हूँ। पहले जग अपना हाथ तो दिखाना मुझे।

चन्दन : क्यों, क्या बात है ?

विक्रम : मैं कहता हूँ, पहले अपना हाथ दिखाओ।

चन्दन : यह लीजिये।

विक्रम : (उसका हाथ सूंघते हुए) हूं ! तो तुम गांजा और चरस पीते हो !

चन्दन : (मुखिया की ओर देखकर) हां, पर इसमें किसीके बाप का क्या जाता है !

विक्रम : तुमने मुझे पहले क्यों नहीं बताया कि तुममें यह बीमारी है ।

चन्दन : कौन कहता है इसे बीमारी ? आपसे जिन लोगों ने शिकायत की है, मैं उन सबसे निपट लूंगा ।

विक्रम : (गुस्से में) क्या मतलब ! (जोर-से चांटा मारते हैं) यह तो उल्टा चोर कोतवाल को डांटवाली बात हुई । जीवन, सुन्दर कुम्हार से कहो, अपना गधा लेकर आये । लदवा दो इसका सब सामान । और इसे उमपर चढ़ाकर निकाल दो, इस गांव में ।

चन्दन (गुस्से से) बाँरे, यह बात ध्यान में रखना, मैं बहुत बुरा आदमी हूं ।

विक्रम : अबे भाग, यह आंखें किसी और को दिखाना ! (एक चांटा और जड़ते हैं) चल, भाग यहां से । मुझे अपने गांव में गुंडे नहीं शरीफ चाहिए । और सुनो जब दिमाग दुरुस्त हो जाय तो फिर आ जाना । जाओ रे लड़को, इसका सामान लदवाकर आओ । अच्छा, ठहरो, मैं भी बगिया तक चलता हूं ।

[भीड़ का शोर "क्या बात है ? क्या हुआ ?" कहते हुए सब जाते हैं, रंग-मंच पर अन्धकार छा जाता है । जीवन

और राकेश आते हैं]

जीवन : उनका व्यक्तित्व ही ऐसा था कि कोई सामने बोलने की हिम्मत नहीं रखता था । एक बार गांव के आस-पास जंगली सुअरों ने अपना डेरा डाल दिया, किसान घबरा उठे । सुबह तक वह किसी-न-किसीका खेत उजाड़ डालते । किसान उनके सामने आकर रोते, फरियाद करते । बापू रात-रातभर बन्दूक लिये खेतों की रखवाली करते । पांच सुअरों को गोली का निशाना बनाया । आखिर सुअर भाग गये ।

राकेश : पूरे शिकारी थे ।

जीवन : गांववालों पर किसी भी तरह की कोई विपदा पड़े, वह आगे रहते । हरेक के दुःख-मुख में हाथ बंटाते । एक दिन शाम को शहर से आकर बैठे ही थे कि रामू गड़रिया आकर रोने लगा ।

[राकेश और जीवन जाते हैं । दूसरी ओर से विक्रम और रामू आते हैं]

विक्रम : क्यों क्या बात है रे ? आखिर इतना घबराया हुआ क्यों है ?

रामू : बापू, बापू ! मेरी एक भेड़ को चीना उठाकर ले गया ।

विक्रम : तो छीन क्यों नहीं ली ? असल में मेरी बन्दूक ने तुम लोगों को बुझदिल बना दिया है । बेच दूंगा इस ससुरी को ।

रामू : अब तो रहम करो, बापू । अभी वह टीले के पासवाले खेत में घुसा है ।

विक्रम : मांस भी नहीं लेने देते, कम्बख्त । अरे जीवन, गांव के छोरों से कहो, अपनी लाठियां और भाले लेकर आयें । ला, पहले भीतर से हमें हमारा भाला लाकर दे ।

जीवन : क्या बन्दूक नहीं ले जायेंगे साथ ?

विक्रम : नहीं ! सबके साथ मिलकर लाठियों से ही शिकार करेंगे । कुछ मशालें और आग जलाने का सामान भी साथ ले लेना । रामू तो आज बता रहा है, पर मुझे परसों ही पता लग गया था कि चीता आ बसा है, टाले पर । उसके साथ उसकी मादा और बच्चे भी हैं । उसे मारना है और बच्चों को जीवित पकड़ना है । चलो, अब देर मत करो । चल रे रामू ! जा रे जीवन, सबसे कह दे, टीले की ओर आ जायें ।

[कहते हुए जाते हैं । रंगमंच पर अंधकार । फिर जीवन और राकेश आते हैं]

जीवन : और वही हुआ । गांववालों में उत्साह भरने के लिए भाले से ही उन्होंने चीते का सामना किया और उसके दो बच्चों को ज़िन्दा पकड़कर लाये । चीते की मादा उस दिन हाथ से निकल गई थी, अगले दिन वह भी चक्कर में आगई । वास्तव में साहस की तो वह सजीव मूर्ति थी । गांव के अमीर-गरीब किसीके यहां कोई व्याह-शादी का या किसी तरह का उत्सव हो, वह सबसे पहले पहुंचते ।

छूत-अछूत का कोई भेदभाव उनमें न था। गांव में किसी भी लड़की की शादी होती, बारात उनकी बगिया में ठहरती। बारातियों की सुख-सुविधा का प्रबन्ध उनकी ओर से होता। एक बार एक विचित्र घटना घट गई। रघुवर कहार की बेटी का ब्याह था। बापू की चौपाल पर ही सब प्रबन्ध था। वह दरवाजे पर खड़े बारात की अगवानी कर रहे थे। तभी लेन-देन की बात पर कुछ भगड़ा हो गया। लड़के का बाप चिम्मा कहार राँव में आ गया।

[कहते हुए जीवन और राकेश बाहर जाते हैं। कुछ क्षण के अन्धकार के बाद उजाला होता है और कुछ लोग मंच पर आते हैं]

चिम्मा : (ऊँचे स्वर में) सुनो भाई, बारात खाना नहीं खायेगी। अभी लौट जायगी। मैं ऐसे ब्रेडमान के यहां अपने लड़के का ब्याह नहीं करूंगा।

[“क्यों क्या बात है ?” “क्या हुआ ?” का शोर]

विक्रम : अरे रघुवर, क्या बात है ? क्या हुआ ?

रघुवर : मेरी किस्मत ही खोटी है, बापू। पहले तो उन्होंने लेन-देन की कोई बात नहीं की; पर अब कहते हैं, पांचसौ रुपया नगद दो तब शादी होगी। मेरे पास तो इस समय फूटी कौड़ी भी नहीं है, बापू।

विक्रम : इसमें ऐसी बिगड़ने की क्या बात है ! जहां और बाने पहले तय कर ली थीं, वहां यह भी तय कर लेते। अब इस तरह बारात का लौट जाना अच्छा नहीं लगता।

चिम्मा : ये बातें पहले खोलने की थोड़े ही होता हैं, बौरेजी! सभी जानते हैं, नगद चार-पांचसौ होती ही है। सोने-सा लड़का था। मुफ्त में ही व्याह दूं, इस भिखमंगे के घर ?

विक्रम : उसे कुछ पता नहीं था। इशारा भी कर देते तो वह बेचारा सोच लेता। अब तो इस तरह बारात का लौटना ठीक नहीं। (पगड़ी उसके पैरों पर रखते हैं) यह मेरी पगड़ी और मेरे गांव की इज्जत का सवाल है।

[शोर बढ़ता है—“बापू आप यह क्या कर रहे हैं ?”]

रघुवर : बापू ? आप यह क्या कर रहे हैं ?

विक्रम : इसीमें मेरे गांव की बेटा की भलाई है। मान जाओ, चिम्मा भाई। बारात का लौटना मेरे दिल पर घाव कर जायगा।

चिम्मा : अजी, मैं आपके दिल के घाव को क्या करूं ! मुझे तो रुपये चाहिए, रुपये। आपको गांव की इज्जत प्यारी है तो आप दे दें।

विक्रम : क्यों नहीं, भैया, तुम्हें जरूरत हो तो मैं जरूर दे दूंगा।

रघुवर : यह नहीं होगा, बापू। इस तरह से गांव में एक गंदा रिवाज पड़ जायगा।

चरण : रघुवर ठीक कह रहा है, बौरेजी। फिर तो सभीकी बारातें लौटने लगेंगी। आप किस-किसको रुपया देते फिरेंगे !

विक्रम : (दुखित स्वर में) अच्छा हुआ, भगवान ने बेटा नहीं दिया नहीं तो मैं भी एक दिन इतना ही कमीना बन

जाता !

चिम्मा : चलो, भाइयो, चलो ! मैं भुस्खड़ों के इस गांव में अपने लड़के का ब्याह नहीं करूंगा । और देखूंगा इसकी लड़की का ब्याह कहां होता है ?

विक्रम : इस लड़की का ब्याह तो अभी होगा, लाला । भांवरो का मुहूर्त भी नहीं टलने दूंगा । मुग्वियाजी ।

चरण : क्या हुक्म है, बापू ?

विक्रम : मेरे अस्तबल से घोड़े लेकर कैथवागी जाओ । भीमा कहार और उसके लड़के को लिवाकर लाओ । कहना, बापू ने बुलाया है । सब बात खुलासा कह देना । क्यों रे, रघुवर ! तुम्हें भीमा का लड़का पसन्द है ।

रघुवर : मुझे पसन्द है, बापू, पर शायद भीमा न माने ।

विक्रम : उसे मनाना मेरा जिम्मा है । मेरे लोग मेरी बात नहीं टालते । तू न जाने ये धामड़ कहां से पकड़ लाया था ।

चिम्मा : देखता हूं, कैसे भीमा अपने लड़के का ब्याह यहां करता है ?

विक्रम : अच्छा जी, यह भी धौंस है । (ऊँचे स्वर में) जीवन, ओ जीवन ।

जीवन : क्या हुक्म है, बापू ?

विक्रम : (हँसकर) ज़रा देखना, इन लोगों की खातिर अच्छी तरह से कर देना । ये भी याद रखें कि किसी बारात में गये थे । बड़े आये हैं ब्याह गोकनेवाले !

जीवन : अच्छा, बापू !

| रंगमंच पर अन्धकार छा जाता है । प्रकाश होने पर जीवन और राकेश आते हैं |

जीवन : बापू ने कहा तो पर उसकी नौबत नहीं आई । उनकी धमकी से चिम्मा और बारानियों की अक्ल ठिकाने आ गई । बापू ने भीमा के लड़के को बुलाकर उसके साथ रघुवर की लड़की का ब्याह कराया । उन्होंने अपनी खुशी से पांचसौ रुपये दिये । सब काम धूम-धड़के और हँसी-खुशी से हुआ । सबसे ज्यादा खुश थे बापू ! गांव में मेल-मिलाप और भाईचारा रखना उनका काम था । वह इन्सान थे और इन्सान ही बनकर जीना चाहते थे । हमें चाहिए ऐसा बरगद । उसकी छांह में हमारा गांव कितना सुखी होगा ।

[पटाक्षेप]

: २ :

अग्रदूत

पात्र

शशिवर	:	एक तपस्वी महात्मा
मृदुला	:	शशिवर की पुत्री
केसरीसिंह	:	एक डाकू
खन्दर, सलीम	:	गांव के नवयुवक
लखनसिंह	:	गांव का जमींदार



पहला दृश्य

[समय : रात्रि ; स्थान : शशिवर का आश्रम, आश्रम में तपस्वी शशिवर का मकान । एक कोने में दीपक टिम-टिमा रहा है । शशिवर इधर-से-उधर घूम रहे हैं]

शशिवर : (स्वगत) जीवन में कितना संघर्ष है । कितनी वेदना है । दुःख भी प्रत्येक क्षण एक चरम सत्य की तरह साथ है । सफलता जीवन की पूजा है, लेकिन वह कितना परिश्रम चाहती है, इसे कोई नहीं जानता । लोग नारे लगाना जानते हैं, पर मैं नारों में विश्वास नहीं करता । मैं कहना नहीं, करना चाहता हूं । मेरा देश और समाज, मैं इन्हें महान् बनाकर ही रहूंगा । यह मेरा छोटा-सा

गांव, यह मेरा प्यारा-सा आश्रम । ये एक आदर्श उपस्थित करेंगे । यह मेरी इच्छा है और मैं जानता हूं कि मेरी इच्छा पूरी होगी ।

मृदुला : (आते हुए) बापू ! क्या कुछ देर विश्राम नहीं करेंगे ?

शशिधर : आराम करना तो चाहता था, पर कहां क्या ? मेरी आंखों में नींद ही नहीं है । । दुनिया सो रही है, कोई तो जागता रहे । तू सो जा, बेटी । मेरे कारण तेरी नींद भी असमय में ही खुल जाती है ।

मृदुला : नहीं बापू, ऐसी तो कोई बात नहीं । मैं सोच रही थी कि आपसे आकर कुछ देर बातें करूं ! मैंने अभी-अभी मपने में मां को देखा तो आचानक नींद उचट गई ।

शशिधर : पगली कहीं की ! जा, जाकर सो जा । मृत आत्माओं के बारे में अधिक नहीं सोचते । तेरी मां देवी थी । बस इससे अधिक और मैं कुछ नहीं जानता । वह चाहती थी कि उसके बच्चे राष्ट्र-हित में लगे रहें । उसका पति देश, समाज और जाति का गौरव बनकर जिये । बस, मैं यही चाहता हूं कि तुम उसकी इच्छा पूरी कर सको ।

[नेपथ्य में किसीके दरवाजा खटखटाने की आवाज़]

शशिधर : कौन है ?

केसरी : मैं हूं, आपका एक सेवक । आपके दर्शनों की अभिलाषा मुझे यहांतक खींच लाई है ।

शशिधर : इतनी रात गये ! ठहरो, मैं आता हूं ।

मृदुला : (धीमे स्वर में) बापू ! कोई शत्रु-पक्ष का न हो ।

मेरे विचार में इस समय दरवाजा खोलना ठीक न होगा ।
शशिधर : मेरा कोई शत्रु नहीं है, बेटी । मेरा द्वार सबके लिए खुला रहता है । (सोचते हुए) तुम बहुत छोटी थीं, जब एक रात महान् क्रान्तिकारी बसुमित्र इसी तरह आये थे । पुलिस उनके पीछे थी । उन्हें भी इसी कुटिया ने आश्रय दिया था । वह रात भी इतनी ही गहरी थी ।

मृदुला : अच्छा, पर मैं इस समय यहां से न हटूंगी ।

शशिधर : तेरे जाने की कोई आवश्यकता नहीं है । तू मृदुला नहीं, मृदुल है । बेटी नहीं, बेटा है । (जाकर दरवाजा खोलते हैं) आओ भाई, कहो, कैसे आये हो ? क्या चाहते हो ?

केसरी : कुछ नहीं, बस आपके दर्शशन की लालसा यहां तक खींच लाई है । बहुत दिनों से सोच रहा था कि आपके दर्शन करूं । लेकिन कब और कैसे करूं, यह आज समय ने बतलाया ।

शशिधर : भाई, क्या तुम्हारा नाम पूछ सकता हूं ?

केसरी : मेरा नाम आप जानते हैं । (मृदुला से) बेटी, तू यदि...

शशिधर (मृदुला को जाने का संकेत) अरी मृदुला, क्या तू भूल गई कि यह बाहर जाड़े में से आये हैं । कुछ दूध हो तो गरम करके ले आओ । (आगंतुक से) क्यों, दूध पियोगे न ? (मृदुला जाती है)

केसरी : किसीके यहां की मैं कोई चीज़ खाता तो हूं नहीं, पर

आपका प्रसाद अवश्य ग्रहण करूंगा !

शशिधर : मैं आपकी बातें समझ नहीं पा रहा हूं । क्या आप छुआछूत में विश्वास करते हैं ?

केसरी : अछूत तो एक तरह से मैं स्वयं हूं ! इसलिए छुआ-छूत में विश्वास कैसे करूंगा ? पर डरता हूं, कोई खाने में विष न मिलादे ।

शशिधर : मैं सीधा-सादा किसान आदमी हूं । पहेलियां सुलझाना नहीं जानता ।

केसरी : कौन कहता है कि आप पहेलियां सुलझाना नहीं जानते । जितनी पहेलियां आपने सुलझाई हैं, शायद ही कोई सुलझा सकता । फिर मैं तो बलहारी हूं उस मनुष्य पर, जिसके पास उलझनें स्वयं ही सुलझती चली आती हैं । (धीरे-से) सुनिये, मेरा नाम केसरीसिंह है !

शशिधर : (प्रसन्नता से) केसरीसिंह !...न जाने क्यों, मेरा विश्वास था कि एक दिन तुम अवश्य मेरे पास आओगे !

केसरी : उस दिन आप जब किसानों की उम सभा में बोल रहे थे तो मैं वहां भेस बदलकर अपने साथियों के साथ आपका भाषण सुन रहा था । मेरा सिर शर्म से झुक गया था जब आपने कहा कि अपने गरीब भाइयों की रक्षा के लिए केसरीसिंह मैं जरा भी शर्म होगी तो वह डकैती का काम छोड़ देगा । मैं स्वयं कभी किसान था और एक दिन विदेशी सरकार के नये-नये अत्याचारों से तंग आकर डाकू बन बैठा । तभी से शाही खजाने को

लूटकर गरीब जनता में बांट देना अपने जीवन का का उद्देश्य बनाये घूम रहा हूँ ।

शशिधर : इससे जनता का क्या बना, बता सकोगे ? अच्छा होता यदि उन किसानों को अपने साथ लेकर सरकार की संगीनों का सीना तानकर सामना करते ।

केसरी : अब तो मैं भी यह बात समझ गया हूँ । तन, मन, धन से, जिस तरह भी हो, जनता की सेवा करना चाहता हूँ । आप मुझे रास्ता दिखाइये ।

शशिधर : रास्ता दिखाया नहीं जाता, खोजा जाता है ।

केसरी : ठीक है, लेकिन क्या मैं आपके समाज में अपनाया जा सकूंगा ?

शशिधर : क्यों नहीं ! तुम्हारे ही वर्ग से आकर एक दिन महर्षि वाल्मीकि हमारे समाज के नेता बने थे ।

केसरी : तो फिर आशीर्वाद दीजिये कि मैं आपका साथ दे सकूँ । मैं अब जाना चाहता हूँ ।

शशिधर : थोड़ा रुको । तुम्हारे लिए दूध आ रहा है ।

केसरी : फिर कभी सही ! अब पौ फटनेवाली है ।

शशिधर : समझा । जाओ, भगवान् तुम्हारा भला करें ।

[नैपथ्य में दूर होती हुई घोड़ों के टाप की आवाज]

मृदुला : (आते हुए) यह क्या ! क्या अतिथि चले गये ।

शशिधर : हां बेटी । जानती है, वह व्यक्ति कौन था ?

मृदुला : नहीं

शशिधर : वह केसरीसिंह था !

मृदुला : (भयभीत स्वर में) केसरीसिंह ! वह आपसे क्या मांग-
ने आये थे, बापू ?

शशिधर : मांगने नहीं, देने आये थे, बेटा !

मृदुला : क्या !

शशिधर : एक वचन ! और वह यह कि आगे से वह कभी डा-
के नहीं डालेंगे । (सहसा आकाश में प्रकाश होता है) हैं,
यह क्या ! सहसा इतना प्रकाश कैसा ! ऐसे लगता है,
जैसे कहीं भीषण आग लग गई हो । (भागने, दौड़ने,
चीखने आदि की आवाजें आती हैं) अवश्य कहीं बहुत
बड़ी दुर्घटना घट गई है । तुम यहीं ठहरो, मैं अभी
आता हूँ ।

[सलीम का प्रवेश, सिर से रक्त बह रहा है ।]

सलीम : बाबा ! खुदा के वास्ते आप वहां न जाइये । जमीं-
दार के कारिन्दों ने हरिया के खेत में आग लगा दी है
और बुझाने के लिए आई हुई जनता पर लाठियां लेकर
टूट पड़े हैं ।

शशिधर : मृदुला, तुम सलीम का ध्यान रखो । इसे कहीं
ठीक ढंग से लिटाओ । मैं अभी आता हूँ ।

सलीम : न बाबा, न ! आप वहां न जाइये । कम्बख्त आपके
खून के प्यासे हो रहे हैं ।

शशिधर : रास्ता छोड़ दे, मेरे बच्चे । मैं स्वयं अपनी आंखों
से सबकुछ देखना चाहता हूँ ।

सलीम : (बेहोशी-सी में) तो फिर मैं भी तुम्हारे साथ

चलूंगा । मैं यहां बैठने नहीं, इत्तिला देने आया था ।

शशिधर : तुम्हारा खून काफी बह चुका है । तन्दुरुस्त सिपाहियों के होते हुए घायल सैनिक मोर्चे पर नहीं जाते ।

मेरे बेटे, तुम आराम करो ! (शीघ्रता से चले जाते हैं)

सलीम : ओह खुदा ! (बेहोश हो जाता है) ।

मृदुला : भैया ! सलीम भैया ! होश में आओ !

दूसरा दृश्य

[वही स्थान । शशिधर के आश्रम में दुखी किसान और मजदूरों की सभा]

शशिधर : भाइयो, यह आत्याचार हमारे लिए नये नहीं है ।

तुम लोगों के देखते-देखते मैं चार बार इस आश्रम को बना चुका हूं । मैं जब कभी सरकार का मेहमान बनकर जेल जाता हूं, मेरे पीछे मेरी साधना का स्वर्ग मिट्टी में मिला दिया जाता है । लेकिन यह मेरा ही नहीं, तुम्हारा भी है । मैं अपने उन साथियों से, जो आज उस आत्याचार की भट्टी में अपना सबकुछ होम चुके हैं, कहूंगा कि वे इस आश्रम को अपना घर समझकर यहां रहें ।

सलीम : बाबा ! आप जानते हैं कि गांव में क्या बात फैलाई जा रही है !

शशिधर : क्या ?

सलीम : जमींदार और उसके कारिन्दे कहते फिरते हैं कि आश्रम में जाना घोर अपराध है । जो यहां रहेगा उसे

जात-बिरादरी से निकाल दिया जायगा, क्योंकि यहां चमार, ब्राह्मण, मुसलमान सब इकट्ठे रहते हैं और एक दूसरे के हाथ का छुआ खाते हैं ।

शशिधर : यह तो खाने की बात है, पर वे तो चमार, ब्राह्मण, हिन्दू और मुसलमान सबका खून चूसते हैं ।

सलीम : खून चूसना उनके धर्म में पाक समझा जाता है, बाबा ।

शशिधर : अब उनसे साफ-साफ कह दो कि हमारे शरीर में और खून नहीं रहा है ।

चन्दर : हां, जितना था, वह उन्होंने चूस लिया । हम मर जायंगे, पर फालतू कर नहीं देंगे । हम जेलों में जायंगे, फांसी के तख्ते पर भूलेंगे, पर बेगैरतों की तरह जिन्दगी नहीं काटेंगे !

शशिधर : तो तुम सब तैयार हो ?

सब : (एक साथ) हम लोग आपके साथ हैं । आप जो कहेंगे हम सब वही करेंगे !

शशिधर : अच्छी तरह से सोच लो । मैं एक बार आगे बढ़कर पीछे हटना नहीं जानता । मेरे साथ वही आगे बढ़े, जिसके सिर पर कफन हो, जिसकी छाती लोहे की हो और जो आफ़तों में भी हँसना जानता हो !

सब : हम सब तैयार हैं !

शशिधर : शाबाश ! अब मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप लोगों के संकट के दिन टल गये !

चन्दर : हम सदा से ही आपको अपना नेता मानते आये हैं,

आप हमारे लिए सबकुछ हैं ।

सलीम : आपका हुक्म हमारे सिर आंखों पर । आप हमारे सरदार हैं । हम आपके इशारे पर अपना सबकुछ कुर्बान कर सकते हैं ।

शशिधर : मुझे आप लोगों से यही आशा थी । अब आप लोग शान्ति से आश्रम के भंडारे में भोजन बनायें और खायें । हमारे यहां छुआछूत का कोई प्रश्न नहीं है । मैं चाहता हूं, इन्सान इन्सान बनकर जिये । इन्सानियत से बड़ा और कोई धर्म नहीं है ।

चन्दर : (एकदम) बाबा ! जमींदारसाहब इधर आ रहे हैं । उनके साथ उनके कारिन्दे भी हैं ।

शशिधर : शुभ लक्षण हैं ! आने दो और हां, तुम सब अपने-अपने काम में लग जाओ ।

[लोगों का जाना । जमींदार लखनसिंह का आना]

लखनसिंह : (गुस्से में) यह कैसा भीड़-भड़क्का इकट्ठा कर रखा था, तपस्वीजी ! यह आश्रम है या उचक्कों के छिपने की जगह !

शशिधर : जमींदारसाहब, यह उचक्कों के छिपने की जगह नहीं है, धरती के बेटों के लिए मां की ममतामयी गोद है ।

लखनसिंह : अच्छी तरह सोच लो, स्वामीजी ! कहीं ऐसा न हो कि लेने के देने पड़ जायं । उनमें कई ऐसे भी हैं, जिन्होंने खून किये हैं ।

शशिधर : खून करनेवाले तो आपके मकान पर शराब के प्यालों

के साथ अट्टहास कर रहे हैं। मेरे पास तो दम तोड़ती हुई लाशें आई हैं।

लखनसिंह : मैं आपसे सीधे शब्दों में यह कह देना चाहता हूँ कि ये लोग बागी हैं, इन्हें शरण देना आपके हित में अच्छा नहीं होगा।

शशिधर : मेरे हितों की आपको इतनी चिन्ता है, उसके लिए धन्यवाद ! वैसे मैं आपको यह बतला दूँ कि मुझे आपकी धमकियों की ज़रा भी परवा नहीं है। जो ब्रिटिश-साम्राज्य की यातनाओं से नहीं डरा, वह आपकी इन गीदड़ भभकियों से क्या डरेगा !

लखनसिंह : अच्छा यह बात है। दो-चार बार जेल क्या काट आये हो, गोया दुनिया फतह कर ली है। तीन कौड़ी की हस्ती नहीं और...

शशिधर : लखनसिंह ! मेरे आश्रम में इस प्रकार की मूर्खता-भरी बातें करने की मनाही है। मैं आपको बतला दूँ कि यहां बोलते हुए आपको यहां के नियमों का पालन करना होगा। यहां आपकी बैठक नहीं कि जिसे चाहा लाल-लाल आंखें दिखाकर डरा दिया। यहां आपको सभ्यता से बोलना चाहिए !

लखनसिंह : मैं आपका भाषण नहीं सुनने आया, स्वामीजी ! मैं आपको बतला दूँ कि इस तरह के आश्रम के ढोंग यहां नहीं चलेंगे। बहू-बेटियों को पढ़ाना कौन-से शास्त्र में लिखा है !

चन्दर : ओहो, तो आप शास्त्रों का ठेका लेकर यहां आये हैं ।

शशिधर : चुप रहो, चन्दर ! जब दो आदमी बातें कर रहे हों तो तीसरे को बीच में नहीं बोलना चाहिए !

लखनसिंह : चन्दर, तेरी खाल खिचवाकर भूसा न भरवा दिया तो मेरा नाम लखनसिंह नहीं ।

चन्दर : खुद ही खेंच के देदूं । आपसे तो खिचने से रही । बाबा की आज्ञा नहीं, वरना अभी तुम्हारा...

शशिधर : चन्दर, मैं कहता हूं, जाकर अपना काम करो । हमें लाठियों से लड़ने की आवश्यकता नहीं है । इनकी लाठियां इन्हें ही मुबारक हों ।

लखनसिंह : यह तो समय ही बतायेगा, शशिधर, कि किसकी लाठी किसे मुबारक होती है ।

सलीम : अंग्रेजों का राज जा रहा है, जमींदारसाहब ! रोटी-पानी भी नसीब होगा कि नहीं, इसकी फिक्र करें ।

शशिधर : (कठोर स्वर में) सलीम, चन्दर ! जाओ अपना काम देखो ।

दोनों : जो आज्ञा, बापू ! (जाते हैं)

शशिधर : जमींदारसाहब, जाइये, आप भी अपने घर जाकर आराम कीजिये । मेरी आपसे कोई व्यक्तिगत शत्रुता नहीं है । मैं आपके सुभाव मान सकता हूं, लेकिन मैंने किसीके रौब में आना नहीं सीखा है । मैं शान्ति का उपासक हूं और इसीमें विश्वास करता हूं । यदि शान्ति से बात करने की इच्छा हो तो आप किसी भी समय

आ सकते हैं, नहीं तो फिर अदालत में मिलेंगे ।

लखनसिंह : तो फिर अदालत ही सही ।

शशिधर : आपकी इच्छा ।

तीसरा दृश्य

[आश्रम में एक ओर से शशिधर दूसरी ओर से मृदुला का प्रवेश । मृदुला खुश है]

मृदुला : बधाई हो, बापू ।

शशिधर : किस बात की बधाई !

मृदुला : मिठाई लाये हो कि नहीं, बापू ? फिर बताऊंगी कि किस बात की ।

शशिधर : (हँसते हुए) पगली कहीं की ! जहां सच्चाई होती है, वहीं जीत होती है । पर मुझे खुशी इस बात की है कि अन्त में लखनसिंह को सद्बुद्धि आ गई और उन्होंने अदालत के बाहर ही सब बातें मान लीं ।

मृदुला : खिसिया गये होंगे ।

शशिधर : इसमें खिसियाने की कौन-सी बात है, बेटी । वे लोग अपने पैसे और रिश्तों के मान पर अकड़ते थे । उन्हें मालूम नहीं कि आज तर्क की दुनिया में बहुत-सी बातें पिछड़ गई हैं । मैंने उन्हें रास्ते में बहुत समझाया, आखिर मान गये ।

मृदुला : अच्छा बापू, चलो, भीतर चलकर कुछ आराम करो । आपका स्वास्थ्य अब दिन-ब-दिन बिगड़ता जा रहा है ।

शशिधर : अब मुझे अपने स्वास्थ्य की चिन्ता नहीं है, बेटी ! मेरा उद्देश्य पूरा हो गया । आज इस मुकदमे को लड़ते-लड़ते दो साल बीत गये । उनका पैसा लड़ता रहा और मेरी बुद्धि ! इसी अरसे में देश भी स्वतन्त्र हो गया । न जाने किस तरह अपने जीवन को संभाले चला आ रहा हूं । (नैपथ्य में गाय के रंभाने का स्वर) दूध तो दुह लिया होगा इसका ?

मृदुला : अभी, कुछ देर पहले दुहा था ।

शशिधर : थोड़ा-सा देदो । शायद कुछ तबीयत सुधर जाय । ऐसे लगता है, जैसे यह धौरी गैया मेरे ही परिवार का एक प्राणी है ।

मृदुला : आपके ही परिवार की प्राणी है, बापू ! आप कैसे भूले जा रहे हैं ।

शशिधर : भूल तो नहीं रहा हूं । न जाने क्यों, मन अपने-आप-में उदास होता जा रहा है । बहुत ही थक गया हूं, आज ।

मृदुला : अचम्भे की बात है ! आज आप भी थकान मान रहे हैं ।

शशिधर : मान तो नहीं रहा, बेटी, महसूस कर रहा हूं । मैंने जीवन में हारना नहीं सीखा । फिर अवस्था का भी तो तकाजा है, मृदुला । देखती हो, कितना बूढ़ा हो गया हूं (नैपथ्य में शोर) लो, यह लोग भी शहर से आ गये । सलीम !

सलीम : आया, बापू !

शशिधर : चन्दर कहां गया है ?

सलीम : गांववालों को बुलाने गया है। आने ही वाला होगा।

हमने उसे बीच रास्ते से पहले ही चलने को कह दिया था।

शशिधर : अच्छा किया ! देखो, लखनसिंह को भी यहां आने के लिए कह देना। मैं उनसे कुछ बातें करना चाहूंगा।

सलीम : अब तो वह बड़े भले बन गये हैं। अपने किये पर पछता रहे थे। हो सकता है, वह खुद ही यहां आयें।

शशिधर : अच्छा है। मैं चाहता हूं, सब लोग यहां एक होकर रहें। भाई-भाई की तरह एक दूसरे से कन्धे-से-कन्धा भिड़ाकर चलें। मेरा अब कुछ पता नहीं है ! (खांसी) शायद अब मैं अधिक दिन जी भी सकूंगा या नहीं।

चन्दर : ऐसी बात नहीं कहते, बापू ! अभी हमको आपकी बहुत आवश्यकता है। हम सदैव आपके संरक्षण में रहना चाहते हैं।

शशिधर : ऐसा सोचना कमजोरी है, चन्दर। मेरा काम पूरा होगया। मुझे हृदय-रोग है। क्या पता, मृत्यु कब धर दबाये। वैसे अब आजाय तो अच्छा ही है। बस...

[खांसी, एकदम लेट जाते हैं]

मृदुला : बापू...(घबरा जाती है)

शशिधर : कुछ नहीं बेटी, घबरा मत अभी...अभी...

सलीम : (देखकर) तबीयत कुछ ज्यादा खराब है। मैं डाक्टर को बुलाता हूं। (जाता है, मृदुला शशिधर को संभालती है)

केसरीसिंह : (बाहर से) क्या शशिधर तपस्वी यहां हैं ? मैं उनसे मिलना चाहता हूं ।

लखनसिंह : आइये ! भीतर आ जाइये । उनकी तबीयत बहुत अधिक खराब है । (केसरीसिंह अन्दर आता है)

शशिधर : (खांसी आती है) कौन आया है ?

केसरी : बापू, मैं केसरीसिंह हूं ।

शशिधर : (स्वर में पीड़ा का अनुभव हो रहा है, साथ में उल्लास भी है) बहुत ठीक अवसर पर आये, मित्र ! तुम्हारी ही याद कर रहा था । तुम्हारे समाचार सुनता रहा हूं । कोई नहीं कह सकता कि यह वही पुराना केसरी-सिंह है । इन दिनों आश्रम को तुम्हारी आवश्यकता है ।

[चन्दर, सलीम का घबराते हुए प्रवेश]

चन्दर : बापू का क्या हाल है, मृदुला ?

शशिधर : हाल ठीक है, चन्दर ! भगवान जिस हाल में रखे, वही ठीक है (देखकर) लखनसिंहजी !

लखनसिंह : जी हां । मैं लज्जित हूं...

शशिधर : छोड़ो उन बातों को । मैंने तुम्हें बुलवाया है और बिना बुलवाये यह केसरीसिंह भी ठीक समय पर आगये हैं । क्या मैं आशा करूं कि पुराने वैर-विरोध भूलकर आप सब लोग मिलकर आश्रम में काम करेंगे... (जोर की खांसी)

लखनसिंह : भगवान आपको चिरायु करें । मैं किस योग्य हूं । मैं सदैव आपकी आज्ञा मानकर अपना कर्तव्य पालन करूंगा ।

[मृदुला की सिसकियां]

शशिधर : अपने वश में अब कुछ नहीं रहा, लखनजी । भगवान के यहां से देवदूत चल पड़े हैं । अब कुछ ही क्षणों की बात है । मृदुला, रोते नहीं, बेटी !

चन्दर : (भीड़ का शोर) बापू सभी ग्रामवासी आये हैं । आपके दर्शन करना चाहते हैं !

शशिधर : कुटिया का द्वार खोलदो । मैं स्वयं सबके दर्शन करना चाहता हूं (रुदन, हिचकियां) मैं चाहता हूं कि मेरी विदा-वेला में आप लोग मुस्करायें, ताकि मैं विश्वास कर सकूं कि आप मेरे पीछे छोड़े अधूरे काम को पूरा कर सकेंगे ! (सहसा हिचकी के साथ मृत्यु । भीड़ शान्ति से आकर द्वार पर ठिठक जाती है, फिर सिसकियां फूट पड़ती हैं । सहसा केसरीसिंह खड़ा हो जाता है)

केसरीसिंह : भाइयो, यह रोने का अवसर नहीं है । हमें उनके कार्य पूरे करने हैं । वह मरे नहीं, अमर हो गये हैं । उन्होंने हमें जीवन दिया और जीना सिखाया । वह हमारे लिए शान्ति, सुख और स्नेह के अग्रदूत थे । महान आत्माएं कभी नहीं मरतीं । हमें उनका काम आगे बढ़ाना है और वह रोने से नहीं, उनके पद-चिन्हों पर चलने से होगा । (सहसा सब लोगों की दृष्टि केसरीसिंह पर जाकर अटक जाती है । एक प्रकाश उभरता है, जो बारी-बारी शशिधर और केसरीसिंह के मुख पर चमकता है ।)

[पटाक्षेप]

: ३ :

सबसे बड़ी जीत

पात्र

सुजान	: एक किसान, आयु ५० वर्ष ।
सुखिया	: सुजान की पत्नी, आयु ३० वर्ष ।
केवल	: सुजान और सुखिया का लड़का, आयु ७ वर्ष ।
अविनाश	: सुजान का पहली पत्नी से पुत्र, आयु १६ वर्ष ।
हकीम	: गांव के बूढ़े हकीम ।
नम्बरदार	: गांव के बूढ़े नम्बरदार ।
बंजू	: एक गुंडा ।

पहला दृश्य

[गांव में सुजान का घर । सुजान बहुत बीमार है । रह-रहकर खांसी उठती है, खांसते-खांसते खाट पर बैठ जाता है ।]

सुजान : (खांसते हुए) हे मेरे ईश्वर, अब क्या होगा !

मेरे पीछे इन बच्चों का कौन है ? (ऊँचे स्वर में)
अविनाश, ओ अविनाश ! अरे कहां चला गया है ।

सुखिया : (चिड़चिड़े स्वर में) मैं क्या जानूं, कहां गया है ?
मुझसे पूछकर कहीं जाता हो तब न । मुझे तो सम-
झता है कि मैं इस घर की नौकरानी हूं । मेरी किसी
भी बात की रत्तीभर परवा नहीं करता । आपने उसे
इतना सिर चढ़ा रक्खा है । मैं क्या...

सुजान : (खीझकर) हर बात की हद होती है, सुखिया ।
तुमने तो झूठ बोलने में कमाल ही कर दिया है । तुम्हा-
री कई बातों को जानते-बूझते भी मैंने उसे बिना कसूर
डांटा है, पीटा है । पर उस बेचारे ने मुंह से उफ़ तक
नहीं की (खांसकर) और तुम दिन में जबतक उसे
पिटवा न लो, गालियां न दिलवा लो, या खुद न पीट
लो तबतक चैन नहीं लेतीं । (करुण स्वर में) सुखिया !
उसपर नहीं तो मुझपर रहम कर । अपने भविष्य
की ओर आंख उठाकर देख । अब इन दो बच्चों के
सिवा इस दुनिया में तुम्हारा रह ही क्या जायगा ?

सुखिया : (शांत होकर) भगवान के लिए ऐसा न कहो ।
मेरे सबकुछ तुम्हीं हो । तुम्हारे बिना इस केवल का क्या
होगा ? मेरा क्या होगा ? हम अनाथ कहां जायेंगे ?
ऐसी बात मुंह से निकालते हुए कुछ तो सोचो ।

सुजान : क्या सोचूं ? जो दीख रहा, है उसके लिए सोचना
कैसा ? अब तो कुछ ही घड़ी का मेहमान हूं । मेरा दम

टूट रहा है, सांस घुट रहा है । (रुककर) एक बात कहूं, सुखिया ।

सुखिया : कहो ।

सुजान : अविनाश को प्यार करना । वही है, जिसने तुम्हारे दिये हुए कष्टों को हँस-हँसकर सहा है । (खांसता है) और कोई होता तो कभीका घर छोड़कर चला गया होता । पर उसने घर की लाज को बट्टा नहीं लगने दिया । तुम्हारा सौतेला बेटा भले ही हो, पर है तो बेटा ही ।

सुखिया : (फिर तेज हो जाती है) मेरी उससे न कभी निभी है, न आगे निभेगी । सारा दिन आवारागर्दों की तरह इधर-उधर घूमता रहता है । उसने इस घर को सराय समझ रक्खा है ।

सुजान : (समझते हुए) इसमें मेरा और तुम्हारा दोष है । हमीं-ने उसे इस घर को सराय समझने पर मजबूर किया है । मेरी और तुम्हारी हर समय की डांट-फटकार ने ही उसे आवारागर्द बनाया है । फिर भी ज़रा सोचो तो कि वह किस आधार पर मेरी और तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध पढ़ रहा है, अपनी क्लास में अच्छे नम्बरों से पास होता है । (बिकट खांसी) अपने जेब-खर्च और किताबों के लिए स्वयं दसवीं में पढ़ता हुआ हकीमसाहब के बच्चों को पढ़ाता है ।

सुखिया : यह सब कहते हुए आपको अच्छा लगता है । इतने

बड़े बाप का बेटा और दूसरों के घर नौकरी करे, कितनी शर्म की बात है ।

सुजान : अपनी-अपनी किस्मत है । उसका बाप उसके लिए उसी समय मर गया, जिस समय एक बच्चे के होते हुए वह दूसरी पत्नी घर में ले आया । (लम्बी सांस भरकर) समझ लो, उस बाप ने उसी दिन बच्चे का गला दबा दिया । (गला भर आता है) मैंने समझा था बच्चे का भविष्य सुधर जायगा, उसे मां की ममता मिलेगी, पर...

सुखिया : जी मैं, मैं ही हूँ कुलच्छनी । मैंने आते ही उसका गला दबा दिया ! (रोने लगती है)

सुजान : (समझाते हुए) सुखिया, घर का भला इसीमें है कि तुम अविनाश और केवल को अपनी दो आंखें समझो । टिमटिमाकर बुझनेवाले इस दीपक की आखिरी रोशनी में अपना भविष्य देखो ।

सुखिया : (रोती हुई) भगवान करे, आप अच्छे हो जायें । ऐसी-वैसी कोई बात हो गई तो मेरा कहां ठिकाना लगेगा ? (सिसकियां भरती है ।)

केवल : (बाहर से आता है) अम्मा, तुम क्यों रो रही हो ? बोलती क्यों नहीं ? बापू, अम्मां क्यों रो रही है ? इसे किसने मारा है ?

सुजान : आ, मेरे पास आ, बेटा । (बड़बड़ाते हुए) अविनाश, ओ अविनाश तू भी आ जा । (कहते-कहते बहोश हो जाता है ।)

सुखिया : (चिल्लाकर) हाय-हाय । यह क्या ? इन्हें तो ज़रा भी होश नहीं रहा । इनकी आंखें घूम रहीं हैं । जाने क्या-क्या कह रहे हैं ! केवल, जा अविनाश को ढूँढ़ ला ।
केवल : भैया अभी आता है, मां । वह हकीमजी को लेकर आ रहा है ।

सुखिया : बड़ा दुष्ट है । बाप के सिगहाने नहीं बैठा । हकीमजी को लेने चला गया । उन्हें तो तू भी बूलाकर ला सकता था ।

सुजान : (होश में आकर) अविनाश, ओ अविनाश, बेटा...

अविनाश : (बाहर से ही) आया, बापू । (बूढ़े हकीम के साथ अविनाश अन्दर आता है ।) बापू, देखो मैं तुम्हारे पास खड़ा हूँ । हकीमजी, बापू को अच्छा कर दीजिये ।

हकीम : घबराओ नहीं । भगवान ने चाहा तो अच्छे हो जायंगे । (नब्ज देखते हैं) अरे, नब्ज तो बहुत धीमी चल रही है । जुवान में ऐंठन आ रही है । मुश्किल है, बेटा । तुम देर से पहुँचे । देखो, फिर भी कुछ-न-कुछ करता हूँ । आगे भगवान मालिक है ।

सुजान : अविनाश ! (कुछ होश में आता है) अविनाश !

अविनाश : हां बापू ! आंखें खोलो, देखो मैं तुम्हारे पास हूँ ।

सुजान : तू कहां गया था, बेटा !

अविनाश : हकीमजी को लेने गया था, बापू । वह आ गये हैं । अब तुम जल्दी ही अच्छे हो जाओगे ।

सुजान : भगवान की इच्छा । बेटा, मेरा अब तुम सबसे साथ छूट रहा है ।

अविनाश : ऐसी बातें मुंह से नहीं निकालते, बापू । तुम अच्छे हो जाओगे ।

सुजान : केवल और सुखिया तेरे ही सहारे हैं । तू हिम्मतवाला, समझदार है । इसीसे मैं निश्चिन्त हूं । देख बेटा, इस घर की इज्जत... (कहते-कहते चुप हो जाता है)

अविनाश : बापू !

केवल : बापू !

सुजान : (रुक-रुककर) शान्ति, शान्ति, शान्ति !

सुखिया : (चीखकर) स्वामी !

[रोने-चीखने का स्वर]

दूसरा दृश्य

[स्थान वही । सुखिया अपने मायके जाने की तैयारी कर रही है । सामान बाहर जा रहा है ।]

अविनाश : मां, यह क्या करने जा रही हो ? अपना घर अपना घर ही होता है, मां । फिर बापू भी मरते समय यही आदेश दे गये थे ।

सुखिया : (डांटकर) मैं दूधपीती बच्ची नहीं हूं, जो तुम्हारी सलाह की जरूरत पड़ेगी । कम्बख्त, बाप को खाकर अब मुझे खाने चला है । तेरे बुरे ग्रहों के कारण ही उनकी मौत हुई ।

केवल : तुम भी हमारे साथ चलो न, भैया ।

सुखिया : क्यों, क्या इसे साथ लेकर अब मामा के घर का

भी सत्यानाश करवायेगा ।

अविनाश : और भी जो कुछ कहना हो कह लो, मां । मैं तुम्हारी सब बातें सुनने को तैयार हूं । पर तुम मेरी एक बात मानो । अपना घर मत छोड़ो ।

सुखिया : वह भी तो मेरे मां-बाप का घर है । मेरा ही घर है । और फिर यहां रहकर हम खायेंगे क्या ? तेरा सिर ! अब तो भैया लेने आये हैं । यह मौका छोड़कर जीवनभर तेरी गुलाम बनकर रहूं । क्यों यही चाहता है न ?

अविनाश : ऐसा मत कहो । तुम जो कहोगी, मैं वही करूंगा जैसे भी होगा, कहीं-न-कहीं से कमाकर लाऊंगा ।

सुखिया : अबतक तो रईसों की तरह रही । अब भिखमंगों की तरह जिन्दगी बिताऊं ! अपनी नेक सलाह और अपने बाप-दादा का यह मकान अपने पास रख । लोग यह न कहें कि सुखिया सब अपने साथ ले गई, तेरे लिए कुछ न छोड़ गई !

अविनाश : मुझे इसकी जरूरत नहीं है, मां । तुम यहां रहो । मैं ही कहीं चला जाऊंगा ।

सुखिया : मैं जानती थी कि यह कलंक भी तू मुझे एक-न-एक दिन देगा ही । कहीं चला जायगा अपनी इच्छा से । लोग कहेंगे, मैंने घर से निकाल दिया ! इसलिए मैं पहले ही जा रही हूं !

अविनाश : अच्छी तरह सोच लो, मां । बाद में कहीं पछताना न पड़े !

सुखिया : पछताऊंगी तो भी तेरे पास नहीं आऊंगी । तू इस बात से बेफिकर रह । केवल, चल जाकर मामा के पास बैलगाड़ी में बैठ । और देख, कोई सामान तो इधर-उधर नहीं रह गया । अविनाश, यह साईकल छोड़े जाती हूं । दस-पांच रुपया लगाकर ठीक करवा लेना । तेरे काम आयेगी ।

केवल : मैं भी भैया के पास रहूंगा, मां ।

सुखिया : चल-चल, बड़ा आया भैया का सगा ! मामा से कह, चलें ।

अविनाश : मां, मान जाओ मेरा कहना, मैं तुम्हारे पांव पड़ता हूं । (पांव पकड़ता है)

सुखिया : अरे, परे हट । क्या पागलों की तरह चिपटा जा रहा है ।

[धक्का देकर चल देती है । नैपथ्य में बैलगाड़ी के चलने का स्वर]

अविनाश : (सांस भरकर) सब चले गये ! अब इस उजड़े हुए उदास घर में मैं अकेला रहकर क्या करूंगा । मैं भी कहीं चल दू । पर कहां ? वाह री किस्मत ! घर में एक फूटा बरतन भी नहीं रहा । कितना डर लगता है अब इस घर में !

[उसी समय हकीमजी आते हैं]

हकीम : (आते हुए) अविनाश, ओ अविनाश । (अविनाश रोने लगता है । हकीमजी उसे रोते देखकर) अरे रोना

है ! रो मत । दुनिया में जिसका कोई नहीं होता, उसका भगवान होता है । तूने ही हाथ जोड़-जोड़कर सब को चुप करा दिया, वरना गांववाले एक पैसे की चीज यहां से न जाने देते । देखते, हरिहर कैसे ले जाता । शर्म नहीं आई उस स्त्री को, एक फूटी कटोरी तक नहीं छोड़ी । चल उठ, हमारे घर चल ।

अविनाश : न बाबा, मैं नहीं जाऊंगा । यहीं रहूंगा । अपने बाप-दादा की भोंपड़ी को नहीं छोड़ सकता ।

हकीम : वह भी तो तेरा घर है, बेटा । वहां तुझे हर तरह से आराम मिलेगा ।

अविनाश : सब समझता हूं, पर रहूंगा यहीं । मां जाती बार यह साइकल छोड़ गई है । इसे ठीक करवा लूंगा । फिर शहर आने-जाने में जो समय जाता है, वह बच जायगा । उस समय को उधर गांववालों के छोटे-छोटे बच्चों को पढ़ाने में लगा दूंगा । (स्वर भर आता है) मां केवल को गंवार बना देगी । मैं चाहता था, वह पढ़-लिख जाता । यही शिक्षा बड़े होने पर काम आती ।

हकीम : फिक्र मतकर अविनाश । तेरी मां बड़े चिड़चिड़े स्वभाव की है । अपने मायके में उसका भाभियों के साथ गुजारा बड़ा ही कठिन है । फिर मैं तुम्हारे मामू को बड़ी अच्छी तरह जानता हूं । बड़ा काइयां आदमी है । उसका सब गहना-कपड़ा दबा बैठेगा । सुखिया को अपनी मूर्खता पर पछताना पड़ेगा । पर तू मेरी

बात मान, बेटा, मेरे घर चल ।

अविनाश : न बाबा, मैं यहां से कहीं नहीं जाऊंगा ।

हकीम : किसी चीज की जरूरत हो तो बता । छोटे दे जायगा ।

अविनाश : जरूरत की चीजों के नाम पर छोड़ा ही क्या है, अम्मा ने । पर धीरे-धीरे मैं सबकुछ जमा लूंगा । पहले कुम्हार के यहां से एक घड़ा ले आऊं, फिर किसी-के खेतों की रखवाली करने की नौकरी पूछूंगा ।

हकीम : तू नौकरी करेगा, बेटा !

अविनाश : पेट पालने के लिए कुछ-न-कुछ करना ही पड़ेगा, बाबा । हाथ तो कहीं फैला नहीं सकता ।

हकीम : तू इतने बड़े बाप का बेटा है !

अविनाश : रोटी तो वह भी खाते थे, बाबा । काम ही तो कर रहा हूं । कोई खराब चीज तो कर नहीं रहा, जिससे पिताजी की इज्जत को धक्का पहुंचे ।

हकीम : अच्छा भाई, तुम हमारी एक बात मानो । यदि तुम्हें नौकरी ही करनी है तो हमारे यहां ही कर लो । दिन में अपना पढ़ आये, शाम को यहां के बच्चों को पढ़ा दिया । गांव के और लोग तुम्हारी कुछ-न-कुछ मदद करेंगे ही । फिर रात को हमारे खेत की रखवाली कर ली । बोलो, क्या लोगे ?

अविनाश : मेरी फीस माफ़ रही है, बाबा । आगे कॉलेज में भी माफ़ करवा लूंगा । सिर्फ खाने को रोटी और पहनने को कपड़ा चाहिए । कभी कुछ किताबों, कापियों

के लिए मिल जाय तो आपकी कृपा होगी ।

हकीम : भगवान चाहेंगे तो सबकुछ होगा (हँसते हैं) पर काम ईमानदारी से करना होगा ।

अविनाश : काम में ढील देखो तो निकाल देना ।

हकीम : अच्छा उठो । मैं तुम्हें काम समझा दूँ । अपनी यह साइकल भी उठा तो । इसे भी आज ही शहर से ठीक करवा लेना । जितनी जल्दी घर पहुँचोगे, उतना ही काम अधिक होगा ।

अविनाश : चलो बाबा, तुम्हारी इस कृपा के लिए क्या कहूँ ?

तीसरा दृश्य

[स्थान : खेत में मचान, रात का डरावना समय । सांय-सांय करती हुई हवा चल रही है । आस-पास से गीदड़ों के बोलने का स्वर । दूर-दूर बनजारों के कुत्तों की आवाज । अविनाश खाट पर लेटा लालटेन जलाये पढ़ रहा है । अचानक उठकर इधर-उधर घूमना शुरू कर देता है । साथ ही खेतों की रखवाली भीकर रहा है ।]

अविनाश : महीनों बीत गये यह काम करते हुए । ऐसा लगता है, मानों बीता हुआ ज़माना एक सपना था । मां और केवल किसीका भी तो कुछ पता नहीं लग सका । खुशी है तो बस इसी बात की कि पहली श्रेणी में पास हुआ हूँ । आगे फीस माफ होने के साथ-साथ,

संभव है, कॉलिज से कुछ और भी सहायता मिल जायगी । (गीदड़ की आवाज और नजदीक आती जाती है) हट बे हट ! खबरदार, जो आगे बढ़ा ! एक खरबूजे के पीछे कहीं अपनी जान न दे देना । (पत्थर फेंकता है । गीदड़ भागता है, हँसता है) भाग गया । ओह, कैसी गहरी रात है ! आसमान से स्याही बरस रही है, स्याही । पता नहीं क्यों ? आज बिना बात रोंगटे खड़े हो रहे हैं । हैं, यह दूर से लालटेन लिये कौन आ रहा है ? (ऊँचे स्वर में आवाज देता है) खबरदार, होशियार, कोई अपना जानवर भूल से भी मेरे खेतों में छोड़ने की कोशिश न करे । नुकसान उठायेगा । कौन है, भाई !

हकीम : (दूर से ही) मैं हूँ, मैं, तुम्हारा बाबा, चुप रहो, ऊँचा मत बोलो, मैं तुम्हारे पास आ रहा हूँ ।

अविनाश : क्यों, क्या बात है, बाबा ? तुम इतने घबराये हुए क्यों हो ?

हकीम : तुम जानते हो, जबसे तुम मेरे पास आये हो, बैजू और मोहन मेरे दुश्मन होगये हैं । वे नहीं चाहते कि तुम्हारी ईमानदारी के कारण मेरे खेतों की ठीक-ठीक रक्षा हो । वे तुम्हारी जान के दुश्मन बने हुए हैं । भगवान के नाम पर तुम मेरा काम छोड़ दो । अपनी जान की रक्षा करो ।

अविनाश : कैसी बहकी-बहकी बातें कर रहे हो, बाबा ! दूसरों

की बातों में आकर क्या मैं अपने बाबा को छोड़ सकता हूँ ?

हकीम : तुम खेतों पर न आया करो, खेतों के लिए दूसरा नौकर रख लेंगे । तुम घर का काम-काज सम्हाल लो ।

अविनाश : नहीं-नहीं मैं किसीके डर से अपने कर्त्तव्य से मुंह नहीं मोड़ सकता । मेरा और आपका खेती की रखवाली का वादा है । आप अपना काम सम्हालें, मैं कहीं और काम करके पेट पाल लूंगा ।

हकीम : समझदार होकर ऐसी बातें नहीं करते, बेटा, जिससे पीछे पछताना पड़े । वे दुष्ट तेरे मामू के रिश्तेदार भी हैं । हो सकता है, तेरी मां और मामू के इशारे पर ही वे तुम्हें परेशान करना चाहते हों ।

अविनाश : मैं किसीकी कोई परवा नहीं करता, बाबा । भगवान जिसका रक्षक हो, आदमी उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता । अभी कल ही मेरा और बैजू का भगड़ा हुआ था, मैंने आपको बताया नहीं ?

हकीम : किस बात पर ?

अविनाश : बात बड़ी ही मामूली थी । बैजू चोरी-चोरी नहर काटकर अपने खेत में पानी दे रहा था । मैंने उसे समझाया कि यह बुरी बात है । इसपर वह मुझे गालियां और पीटने की धमकियां देने लगा । मैंने जाकर नम्बरदार को सब बातें बतला दीं । उन्होंने बैजू को बुलाकर मेरे सामने ही डांटा ।

हकीम : ये गांव के बिगड़े हुए लोग हैं । इनसे दुश्मनी करना अच्छी बात नहीं है, बेटा ।

अविनाश : देश आजाद हो चुका है, बाबा । लूट-पाट का जमाना चला गया है । चीजों का राष्ट्रीयकरण हो रहा है । उसने नहर का पानी नहीं चुराया, बल्कि राष्ट्रीय सरकार को धोखा देना चाहा है । यह बात नम्बरदार तक पहुंचानी बहुत जरूरी थी । हमें जैसे भी हो गांव के लोगों का चरित्र ऊंचा उठाना है । समझा-बुझाकर डांट-फटकारकर, जैसे भी काम चल सके, चलाना है ।

हकीम : तुम्हारा कहना ठीक है, भैया । पर फिर भी देख-भालकर चलना है । उठ, चल जल्दी घर पहुंच जायं । आज रात को ही वे दुष्ट कुछ-न-कुछ उपद्रव करनेवाले हैं ।

अविनाश : मैं तो यहां से नहीं जाऊंगा । बाबा, डरकर जाने का मतलब है कि उनके हाँसले और बढ़ जायेंगे । उनके हमले का जवाब दूंगा ।

हकीम : बेटा, वे कई होंगे । अब चल । गांव से और आदमी लेकर आयेंगे ।

अविनाश : नहीं बाबा, इतनी देर में वे हमारी खेती उजाड़ देंगे । मैं यहां से कहीं नहीं जाऊंगा । तुम जाओ, तुम्हारे पास लाठी है, ज़रा देख-भालकर जाना ।

हकीम : (धीरे-से) फिर मैं भी नहीं जाऊंगा । खेत के उधर से किसीके चलने की आवाज़ है । ध्यान से सुनो, शायद जानवर हैं ।

अविनाश : मैं अपनी लाठी ठीक कर लूं । (ऊँचे स्वर में)
कौन है रे ? किसकी मौत यहां खींच लाई है ? अपने
जानवरों को काबू में करो, नहीं तो सबको कांजी हाऊस
पहुंचा दूंगा ।

बैजू : (आते हुए) आज तो तेरी ही मौत यहां घूम रही है,
अविनाश । आज देखना है, कौन तेरी रक्षा करता है ?

अविनाश : कौन, बैजू-भैया हैं ! इसमें ऐसी बिगड़ने की क्या
बात है ? अपने जानवर खेत से निकाल लो । भगड़े
की क्या जरूरत है ।

बैजू : कैसा सीधा होकर बात कर रहा है । नम्बरदार की
शिकायत का मजा चखाने आया हूं, बेटा । हां, एक बात
पर माफ़ कर सकता हूं कि आगे से तू हकीम के खेतों
की रखवाली छोड़ दे ।

अविनाश : (हँसता है) ताकि तुम्हारे जानवर यहांपर आराम
से चर सकें ।

हकीम : (धीरे-से) ये तो कई आदमी दीखते हैं ।

अविनाश : हां, देखो बाबा । मैं इन सबसे निबट लूंगा । तुम
सहायता के लिए मचान पर खड़े होकर और लोगों को
पुकारना । (बैजू से) अब भी तेरी भलाई इसीमें है
कि जानवरों को लेकर घर चला जा ।

बैजू : लगा दो इनके खेतों में आग ।

अविनाश : खबरदार, एक कदम भी किसीने आगे बढ़ाया
तो मुझसे बुरा कोई न होगा ।

बैजू : देखते क्या हो जी, जमाओ इसपर लाठी ।

अविनाश : बैजू, मेरे हाथ में भी लाठी है । अच्छा ले ।

(लाठी मारता है) बैजू चीखकर गिरता है । लाठियों के चलने की आवाजें । हकीमजी “दौड़ो, भागो, बचाओ” की आवाजें दे रहे हैं ।

हकीम : (चिल्लाकर) अविनाश के मचान पर डाकुओं ने हमला कर दिया है । रक्षा करो, भागो, बचाओ ।

बैजू : मेरी तो आंखों के आगे अन्धेरा छा रहा है । अब मोहन, एक हाथ इस बुढ़े के भी जमा दे ।

अविनाश : पहले मोहन अपनी खैर तो मनाले । आह, मर गया, मेरे राम, पर ले दुष्ट, तू भी मज़ा चख । (मोहन की चीख)

हकीम : क्या हुआ, बेटा ? चिन्ता मत कर । बुढ़ा हूं तो क्या, पुराना लठैत हूं । उधर गांव से लोगों के आने की आवाजें भी आ रही हैं । लालटेन लिये लोग आ रहे हैं । (“भागो, दौड़ो” का शोर ।)

बैजू : हमारा भला अब इसीमें है कि हम जानवरों को लेकर यहां से भाग चलें । (अपने जानवरों को भगाते हुए ले जाते हैं ।)

हकीम : अविनाश, अविनाश ! आंखें खोल बेटा, घर चलें ।

चौथा दृश्य

[स्थान : पहले दृश्यवाला । अविनाश खाट पर लेटा हुआ है । हकीमजी देख रहे हैं ।]

नम्बरदार : (आते हुए) हकीमजी, अविनाश की तबीयत का क्या हाल है ?

हकीम : कौन नम्बरदारजी ! अन्दर आ जाओ । अब तो इसकी तबीयत कुछ अच्छी ही दीखती है ।

नम्बरदार : अविनाश, मैंने उनसब बदमाशों को पकड़ मंगाया है । मेरी चौपाल में बैठे हैं । पंचायत होने जा रही है । बस, वहां तेरा ही इन्तज़ार है । तेरी बहादुरी की सारा गांव प्रशंसा कर रहा है । बेटा, चलकर उन बदमाशों को दंड दे ।

अविनाश : मुझमें वहांतक जाने की ताकत नहीं है, काका । फिर मैं दंड देने के पक्ष में नहीं हूं । मेरे कहने पर पंचायत अबकी बार उन लोगों को समझा-बुझाकर क्षमा कर दे । उसका प्रभाव भी आप लोग देखें ।

नम्बरदार : अरे बेटा, उन दुष्टों पर क्षमा का प्रभाव कुछ नहीं पड़ेगा । वे लोग बड़े कमीन हैं । इससे तो उन्हें ढील मिल जायगी । समझेंगे, पंचायत डरती है उनसे । इसलिए तू उठकर चल और पंचायत को अपना काम करने दे ।

अविनाश : मैं पंचायत को अपना काम करने से तो नहीं रोक्

रहा, पर मैं इतना जरूर चाहता हूं कि एक बार उन्हें प्यार के मंत्र से वश में किया जाय तो कैसा रहे ? मुझमें वहां तक जाने की हिम्मत इस समय नहीं है, नहीं तो मैं वहीं जाकर उन्हें क्षमा कर देता ।

नम्बरदार : हम एक-दो आदमियों के सहारे तुम्हें वहां ले चलेंगे ।

हकीम : नहीं नम्बरदारजी, इसे हिलाने-डुलाने की कोशिश न की जाय तो अच्छा है । असल में इसे चोटें काफी आई हैं । दो-चार दिन खाट पर रहकर ही आराम करे तो अच्छा है । फिर मैं जो होऊंगा इसकी तरफ से, जानवर तो मेरे खेतों में छोड़े गये थे न ।

नम्बरदार : जैसी तुम दोनों की इच्छा । (सोचते हुए) ऐसा करो हकीमजी, पंचायत यहीं बुला लो ।

हकीम : यह तो बहुत अच्छी बात है ।

अविनाश : मेरी बात को ध्यान में रखना, काकाजी । हो सके तो एक बार उन्हें क्षमा कर देखना । क्षमा से शायद उनका हृदय बदल जाय ।

नम्बरदार : उनसे आशा करना बेकार है, बेटा । मैं उन्हें बहुत अच्छी तरह से जानता हूं । वे लोग बहुत ही नीच हैं ।

अविनाश : स्नेह और प्यार से ही नीच को ऊपर उठाया जा सकता है, काकाजी । सच यह है कि हमें अपने यहां से अविद्या का अन्धकार दूर करना होगा ।

नम्बरदार : यह सब एकदम कैसे दूर होगा, बेटा ।

अविनाश : इसमें निराश होने की बात नहीं है । अच्छा होते ही अपनी चौपाल में बड़ी उम्रवालों के लिए रात की पाठशाला खोल दूंगा । रोज रात को एक-दो घण्टे पढ़ाया करूंगा । देखना कुछ ही महीनों में गांव की दशा कैसे सुधरती है । मेरे विचार में बजाय इन भगड़ों के आज यह बात पंचायत के सामने रखें तो और भी अच्छा रहेगा ।

हकीम : भगवान तेरी उम्र बड़ी करें, बेटा ! (नम्बरदार से)
नम्बरदारजी, अबकी बार इसकी बात ही मान देखो ।
समझा-बुझाकर उन्हें क्षमा कर दो ।

अविनाश : इसका फल वास्तव में बड़ा अच्छा होगा, काकाजी ।

नम्बरदार : तेरी इच्छा पूरी होगी, बेटा । अरे हां, यह तो बता, कबसे शुरू करेगा अपनी पाठशाला ।

अविनाश : बस, पांच-छः दिन में ज़रा ठीक हो जाऊं ।

नम्बरदार : आओ हकीमजी, अब चलें । लोग वहां इकट्ठे हो गये होंगे । आज इसी बात पर फैसला कर लिया जाय ।

पांचवां दृश्य

[स्थान : अविनाश का कमरा । पंचायत का शोर, लोगों का भीड़-भड़कना]

हकीम : पंचों और भाइयो, आप सब जानते ही हैं कि

पंचायत मेरी ही प्रार्थना पर हो रही है। मोहन और बैजू की शरारत के कारण यह सारा भगड़ा हुआ है। उन्होंने रात मेरे खेतों में अपने जानवर चरने छोड़ दिये। अविनाश को, जो कि उन खेतों की देखभाल कर रहा था, उन्हें रोकने पर उन्होंने मारा-पीटा। मुझे इस बात का पहले ही पता लग चुका था और मैं वहां पहुंच गया था। मेरे शोर मचाने पर आपमें से कई लोग मदद के लिए दौड़े और आप लोगों को आता देखकर ये लोग वहां से भाग खड़े हुए। अगर मैं वहां न पहुंचता और आप लोगों को मदद के लिए न पुकारता तो ये लोग उसको जान से मार देते।

नम्बरदार : क्यों बैजू और मोहन, क्या बात है ? तुम लोगों की गुंडागीरी से सारा गांव परेशान है। यह रातवाली घटना तो बहुत ही शर्म की है, तुम्हारे लिए और सारे गांव के लिए। कुछ कहना चाहते हो इस बारे में ? सारा गांव तुम्हारे खिलाफ है।

बैजू : भैंसें रस्से तोड़कर चली गई थीं। हम उन्हें ढूंढ़ने गये थे। अविनाश हमें देखते ही गालियां देने लगा। बस, इसी बात पर भगड़ा हो गया। उसने लाठी मारकर मोहन का सिर फोड़ दिया।

नम्बरदार : मरता क्या न करता ! आखिर उसे अपना बचाव भी तो करना था। एकदम सभी जानवर रस्सा कैसे तुड़ा गये ? फिर सीधे हकीमजी के खेतों में ही

क्यों पहुंच गये । रास्ते में ही तुम्हारे खेत थे । उनमें वे क्यों नहीं चरने लग गये ? तुम्हारी दलील कुछ जंची नहीं ॥ असल में देखा जाय तो तुम लोगों ने जान-बूझकर ही यह काम किया । तुम्हारी नीयत बुरी थी ।

[लोगों का शोर बढ़ता है । “ये हैं ही कमीन”, “इन का हुक्का-पानी बन्द कर दो,” “इनसे सब लोग बोल-चाल बन्द कर दें” ।]

नम्बरदार : क्यों अविनाश, तुम्हें कुछ कहना है ?

अविनाश : मेरी ओर से हकीमजी बोल रहे हैं । मुझमें ऊंचा बोलने की हिम्मत नहीं । इन्हें क्षमा कर दो ।

नम्बरदार : भाड़यो, शान्त हो जाओ । शोर मचाने की कोई जरूरत नहीं है । फालतू शोर में असली बातें नहीं हों पातीं । आप जो कहते हैं, वह ठीक है । मेरी अपनी भी राय यही है । आप सबने मुझे अपना सरपंच चुना है । इसलिए आप मेरी बात ज़रा ध्यान से सुन लें । पंचायत शुरू होने से पहले ही मैं अविनाश से बातें कर चुका हूं । इसका कहना है कि मेरी ओर से अबकी बार उन्हें क्षमा कर दिया जाय । सो मैं चाहता हूं कि एक बार अविनाश की बात भी मान ली जाय ।

हकीम : मेरी फसल का नुकसान हुआ है, पर अविनाश की इच्छा को पूरी करने के लिए मैं अपने भगड़े को समाप्त करता हूं ।

नम्बरदार : बैजू और उसके साथी कान खोलकर सुन लें ।

सजा के रूप में एक बालक की ओर से क्षमा मिली है । यदि इनमें ज़रा भी शर्म होगी तो ये आगे से ऐसी हरकत नहीं करेंगे । (गांववालों की हल्की-हल्की आवाज) अब एक बात मैं आपसे और कहना चाहता हूँ, जो हम सबके फायदे की है । हममें से बहुत-से लोग ऐसे हैं, जो एक अक्षर भी नहीं पढ़ सकते । कहीं से एक चिट्ठी आ जाय तो उसे पढ़वाने के लिए उन्हें दस दरवाजे घूमना पड़ता है । यह सब सोचकर आप लोगों को पढ़ाने की इच्छा से अविनाश अपनी बैठक में रात की पाठशाला खोल रहा है । पांच-छः दिन बाद अविनाश के ठीक होते ही वहां पढ़ाई शुरू हो जायगी । आशा है, आप सब लोग इससे लाभ उठाने की चेष्टा करेंगे ।

[सभा में हर्षपूर्वक ध्वनियाँ, “जरूर पढ़ेंगे” “हम पढ़ेंगे” इत्यादि आवाजें]

हकीम : कोई यह न समझे कि इसमें उसका कुछ स्वार्थ है या आप लोगों पर किसी तरह का कोई खर्च पड़ेगा । यह सब गांव की उन्नति के विचार से उसने सोचा है । यह सबकुछ पंचायत की ओर से होगा ।

नम्बरदार : अच्छा तो अब मैं इस सभा को समाप्त करता हूँ ।

[पंचायत समाप्त होती है । सब लोग घरों को जाते हैं । बाहर जाकर बैजू लौट आता है । अविनाश अपने कमरे में खाट पर तकिये के सहारे लेटा है]

अविनाश : आओ भैया, आओ । मेरे योग्य कोई सेवा हो तो

बताया ।

बैजू : मुझे और अधिक शर्मिन्दा मत करो । मैं सच्चे हृदय से कह रहा हूं, अविनाश ! मैं अपने किये पर पछता रहा हूं । मुझे पंचायत सख्त-से-सख्त सजा दे देती तो भी शायद मुझे इतना दुःख न होता, जितना मुझे तुम्हारी इस क्षमा से हुआ है । वास्तव में तुम जीते मैं हारा ।

अविनाश : आप मुझसे बड़े हैं, मैं आपका छोटा भाई हूं । मेरा ऐसा विचार था, भैया, कि आपने यह सबकुछ अपनी इच्छा से नहीं, बल्कि किसीके बहकावे में आकर किया है ।

बैजू : तुम्हारा विचार काफी हद तक ठीक है । मैं पांच-छः दिन हुए मुखिया के गांव गया था । उसके भाई माधो-सिंह, तुम तो जानते ही हो, मेरे बहुत अच्छे दोस्त हैं । उनका इशारा था कि मैं तुम्हें परेशान करूं । उसीका परिणाम रात की घटना थी । पंचायत मुझे सजा देकर शायद मेरा कुछ न बिगड़ पाती । मैं आदी हो चुका हूं, इस तरह की सजाओं का । पर तुम्हारी इस अनोखी सजा ने मुझे हमेशा के लिए हरा दिया ।

अविनाश : सबकुछ होते हुए भी इन्सान हो, तभी इतनी जल्दी पसीज गये, नहीं तो आज की दुनिया में क्षमा की परवा कौन करता है !

बैजू : तू मेरे साथ मेरे घर चल । वहां तेरी टहल अच्छी तरह हो सकेगी । मैं हूं, तेरी भाभी है । अम्मां है,

बच्चे हैं। सबमें तेरा दिल बहला रहेगा।

अविनाश : सब आपकी कृपा है। यहां भी दिल बहला ही रहता है। दिन में भी कोई-न-कोई आया ही रहता है। रात नंबरदारजी का घनश्याम, हकीमजी का वंशी यहां आकर सोये थे। एक बात तो बताओ, भैया।

बैजू : पूछो।

अविनाश : मां और केवल ठीक हैं, वहां ? केवल के बिना यह दुखी घर बड़ा ही सूना-सूना लगता है।

बैजू : भाई, अब तुमसे क्या छिपाना ! मुखिया वहां बड़ी ही दुखी है। पर बेचारी अब कर ही क्या सकती है ?

अविनाश : क्यों, क्या बात है ?

बैजू : बात क्या होगी, भाई। माधोसिंह कोई उसकी पूजा करने के लिए तो ले नहीं गया था। घर में नौकरानी न रखी, विधवा बहन रखली। चौका-बरतन कर, चक्की पीस, जानवरों को चारा खिला, पानी पिला, दिनभर इसीमें लगी रहती है। उस दिन रोने लग गई, मेरे आगे। कह रही थी, “गहना, कपड़ा, रुपया-पैसा जो भी लाई थी, सब माधोसिंह और उसकी बीवी दबा बैठे हैं।” माधो की पत्नी मुरली बड़े सख्त स्वभाव की है।

अविनाश : और केवल कैसा था ?

बैजू : उस बेचारे का भी बुरा हाल था। दिनभर जंगल में पशुओं को चरा लाता है। बाकी सुबह-शाम मां की मदद पर लगा रहता है।

अविनाश : (भावावेश में) बड़ा बुरा है, यह तो । मेरे जीतेजी ऐसा नहीं हो सकता । मैं आज ही उनके गांव जाऊंगा । मां आये चाहे न आये केवल को साथ ले आऊंगा । इस तरह तो उसका जीवन बरबाद हो जायगा ।

बैजू : मानता हूं, तुम्हारी बात ठीक है, पर इतनी जल्दी की जरूरत नहीं । कुछ स्वस्थ हो लो, फिर चलना । मैं भी तुम्हारे साथ चलूंगा । माधोसिंह तुम्हें खत्म कर देना चाहता है, ताकि यहां की जमीन-जायदाद पर उसका कब्जा हो सके । इसलिए वहां जग तैयार होकर चलेंगे । हां, यदि तुम कहो तो मैं केवल को ले आता हूं । सुखिया आना चाहेगी तो उसे भी साथ ले आऊंगा ।

[तभी बैलों के गले की घंटियां बजती हैं और बैलगाड़ी आकर रुकती है । केवल भागता हुआ आता है ।]

केवल : भैया, हम आ गये । मामी से अम्मा लड़ पड़ी । मामी ने कहा, तुम यहां से चली जाओ ।

अविनाश : आज्ञा, मेरे पास आज्ञा, केवल । हे भगवान, तुम सबकी सुनते हो । मां कहां है ?

केवल : बैलगाड़ी से सामान उतरवा रही है । मैं तुम्हें बहुत याद करता था, भैया । और तुम ?

अविनाश : तुझसे भी ज्यादा । (इतने में सुखिया आती है ।)

बैजू : राम-राम, काकी सुखिया ।

सुखिया : राम-राम, भैया !

बैजू : अपने वीर बेटे को आशीर्वाद दो, उसने सारे गांव की

डज्जन को चार चांद लगा दिये हैं। अब इसे अपना प्यार दो, काकी।

मुखिया : अब इसका प्यार पाने आई हूं, भैया। बेटा अविनाश, (रोती है) अपनी पगली मां को क्षमा कर दो।

अविनाश : मां, क्यों मुझपर पाप चढ़ा रही हो ! मैं तुम्हारा बालक हूं, तुम माता। तुम्हारे लौट आने से मुझे कितनी खुशी हुई, इसका कोई भी अन्दाजा नहीं लगा सकता ! मैं तुम लोगों को लेने आनेवाला था।

मुखिया : हम अपने-आप चले आये। कल शाम मुझे वहां किसीने बता दिया था कि माधो के इशारे पर तुम्हें लोगों ने बुरी तरह पीटा है। मेरा जी घबरा उठा। रात फिर मेरी उसकी घरवाली से इसी बात पर खूब लड़ाई हुई। सुबह पांच बजे ही जानकीदास की बैलगाड़ी जुड़वाकर वहां से मैं चल दी।

बंजू : अपना घर अपना ही होता है, मुखिया काकी। तुमने यहां आकर इसका और अपना सबका भला किया है।

मुखिया : अरे बेटा, बता तो सही, वे कौन दुष्ट थे, जिन्होंने तुझे मारा? वे लोग मुझे जानते नहीं। मैं उनके मकान की ईंट-से-ईंट बजा दूंगी।

बंजू : (हँसकर) तू अब उनका नाम पूछकर क्या करेगी, काकी ? इसने खुद ही उन्हें सीधा कर दिया है। अब तो वे लोग इसके दास हो गये हैं।

मुखिया : जो कुछ भी है, पर तू नाम तो बता उनके ?

अविनाश : अच्छा बताता हूं, । पहले तू कुछ देर आराम कर ले ।

बैजू : अभी तुझे सारी कहानी मुनाये देते हैं । क्यों, अविनाश ।

(दोनों हँसते हैं)

अविनाश : और क्या ? तू मेरे पास बैठ, मां । बैजू भैया,
सामान गाड़ी से उतरवा लाओ । आज इस घर की
किस्मत फिर जागी है ।

सुखिया : (लम्बी सांस लेकर) अपना घर, अपना ही घर होता
है, बेटा ।

[पटाक्षेप]

: ४ :

मिट्टी और सोना

पात्र •

कस्तूरी	: रामसिंह की पत्नी ।
गोपाल	: रामसिंह का पुत्र (अवस्था आठ- नी वर्ष) ।
धन्नो काकी	: गांव की एक बूढ़ी औरत, कस्तूरी की पड़ोसिन ।
रामसिंह	: अर्धेड़ उम्र का एक किसान ।
बिरजू	: धन्नो काकी का बेटा, एक युवक ।
नम्बरदार	: गांव के बूढ़े नम्बरदार ।
हकीम	: गांव के हकीम

पहला दृश्य

[स्थान : एक ग्रामीण-घर, एक तरफ एक-दो सन्दूक रखे हैं, एक कोने में हल, फावड़ा इत्यादि खेती का सामान रक्खा है, दूसरे कोने में खाट खड़ी है, पीढ़ी पर बैठी कस्तूरी चक्की चलाती हुई हल्के स्वर में किसी लोकगीत की पंक्ति गुन-गुना रही है, दीवार पर दिया जल रहा है। तभी गोपाल बाहर से खेलकर आता है ।]

कस्तूरी : (गोपाल की ओर देखकर) तू अबतक कहाँ था रे, गोपाल !

गोपाल : लड़कों के साथ कबड्डी खेल रहा था, मां ।

कस्तूरी : इतनी देर तक खेलते रहना अच्छा नहीं होता, बेटा ।

मैं तुझसे कितनी बार कह चुकी हूँ कि दीये-जलते ही घर आ जाया कर और खाना खाकर कुछ देर पढ़ा कर ।

अच्छे नम्बरों में पास होगा तो मैं तुझे इनाम दूगी, समझा ।

गोपाल : जानता हूँ, मां । आज ही कुछ देर हो गई, नहीं तो हर रोज मैं जल्दी ही आ जाता हूँ । अच्छा, अब रोटी दो, मुझे बड़े जोर की भूख लगी है ।

कस्तूरी : देख, उस थाली के नीचे परोसकर रखी है । हाथ धोकर घड़े में से पानी भर ले और रोटी खाले । फिर थोड़ी देर पढ़ना और तब सो जाना ।

गोपाल : तो क्या तुम अभी मेरे साथ रोटी नहीं खाओगी ?

कस्तूरी : तुम खालो, मुझे अभी भूख नहीं है । मैं तुम्हारे पिताजी के आने पर उन्हें खिलाकर फिर खाऊंगी ।

गोपाल : तब मैं भी पिताजी व तुम्हारे साथ ही खाऊंगा ।
(मां के पास बैठता है)

कस्तूरी : कैसी पागलों जैसी बातें करता है । चल उठ, जा, खाना खा ले ।

गोपाल : नहीं मां, मुझे भूख नहीं है । आज मैं पिताजी के साथ ही रोटी खाऊंगा । मैंने कितने ही दिनों में उनके साथ बैठकर खाना नहीं खाया ।

कस्तूरी : ज़िद नहीं करते, बेटा ! (दुलार से) जिद्दी बच्चों को लोग अच्छा नहीं समझते । चल, अब मेरी बात मान ! फिर सुबह तुझे उन्हींके साथ खिलाऊंगी ।

गोपाल : मुझे क्यों बहकाती हो, मां । वह सोकर उठते ही नहीं, तबतक मैं मदरसे चला जाता हूं । नहीं, आज तो मैं उन्हींके साथ खाना खाऊंगा ।

कस्तूरी : (लम्बी सांस भरकर) हे भगवान् ! मैंने ऐसे कौन-से अपराध किये हैं, जिनके लिए तू मुझे इतना सता रहा है ।

गोपाल : ऐसी बातें क्यों करती हो, मां ? अच्छा मां, अगर मैं पास हो गया तो तुम मुझे साइकिल ले दोगी न ?

कस्तूरी : हां, ले दूंगी बेटा ! अब तू मेरा कहना मान ले । खाना खाकर सो जा ।

गोपाल : मुझे नींद नहीं आ रही । अच्छा, मैं अपनी खाट पर लेटकर पढ़ता हूं । थोड़ी देर तू और चक्की चला ले । मां, सुबह से काम करते-करते तू थकती नहीं है ? जब देखो तब कुछ-न-कुछ करती ही रहती हो । कभी चक्की पीस, कभी चर्खा चला, कभी धान कूट । मां, आजकल पिताजी शहर में इतनी देर क्यों रहते हैं ? किसी दिन मैं भी उनके साथ शहर जाऊंगा ।

कस्तूरी : (घबराकर) नहीं, बेटा नहीं, तुझे मैं शहर नहीं जाने दूंगी । तू अपने खेतों को सम्हालेगा । तुझे मैं दुकान नहीं करने दूंगी । तू तो किसान बनेगा । हमें अपनी ज़मीन सम्हालनी है । (हलकी आवाज़ में) इस शहर की

दुकान के पोछे ही तो हमने अपना सबकुछ बरबाद कर लिया है। शहर हमारे पीछे भूत बनकर चिपटा है।

गोपाल : अपने-आपमें ही क्या बोलती जा रही है, मां ? ऊंचे-ऊंचे कह न, मैं भी कुछ सुनूं।

कस्तूरी : कुछ भी तो नहीं कह रही, बेटा। जा, जाकर पां। मुझे काम करने दे।

गोपाल : अच्छा, मैं जाता हूं। मेरे साथ अब बात मत करना। मुझे पढ़ना है।

कस्तूरी : (हाथ जोड़कर, आंखें बन्द करके) हे भगवान, इस बच्चे का भविष्य तुम्हारे ही हाथ में है। मैं नहीं चाहती कि इसके ऊपर इसके पिता की काली छाया पड़े। मैं करूं तो क्या। उन्हें समझाकर हार गई। पर मेरी बात कोई माने तब न ! मेरी हैमियन तो इस घर में एक नौकरानी से भी गई-बीती है। (रुककर) यह पांच मेर नाज पीस लू। तब कहीं कुछ और काम शुरू करूंगी। क्या मेरी जिदगी इसी तरह बीतेगी ? दूसरों का आटा पीसते और सूत कातते ! अपना भरा-पूरा मोने का घर इस आदमी ने मिट्टी में मिला दिया ! (दरवाजा खटखटाता है) ओहो, गोपाल जाती बार सांकल लगा आया दीखता है। शायद वह आ गये।

[जाकर दरवाजा खोलती और थोड़ी देर बाद धनो काकी के साथ लौटती है।]

धनो : कहो बहू, सब ठीक-ठाक तो है न ?

कस्तूरी : सब तुम्हारी दया है। आओ, इस मूढ़े पर बैठ जाओ ।

धन्नो : मैं घर में हरनामसिंह को रोटी खिला रही थी कि ऐमा मालूम पड़ा, मानों तुम्हारे घर से चक्की चलने की आवाज आ रही हो । मैंने सोचा कि हो-न-हो, तुम्हीं अकेली बैठी चक्की के सहारे अपना वक्त काट रही होगी ।

कस्तूरी : अकेली बैठी कुछ-न-कुछ तो करना ही हुआ, धन्नो-काकी । ठाली बैठे जी ऊब जाता है ।

धन्नो : कभी हमारे यहां ही चली आया करो, बहू ।

कस्तूरी : घर के काम-धन्धे से फुर्सत ही कहां है ! गोपाल, ओ गोपाल ! लो, पढ़ने बैठा था । भूखा ही सो गया दीखता है ।

धन्नो : रामसिंह अभी नहीं आये क्या ?

कस्तूरी : नहीं, बस अब आने ही वाले हैं ।

धन्नो : बिटिया, रामसिंह को ये बुरी आदतें कहां से लग गई । गांजा, शराब और चरस...

कस्तूरी : मैं क्या जानूं, काकी ? हमारे भाग ! अब तो जब देखो ठर्रा चढ़ाये रहते हैं ! मैं तो समझाते-समझाते हार गई । मेरी मानें तब न !

धन्नो : तुम्हे तो बड़ा माने था, बहू ! न जाने अब यह उल्टी गंगा कैसे बहने लगी है । आज आने दो, मैं उसे समझाऊंगी ।

कस्तूरी : न, काकी । अपनी इज्जत आदमी के अपने हाथ होती है । चौबीसों घण्टे गुस्से में भरे रहते हैं । तुम्हींपर बरस पड़े तो अच्छा थोड़ा होगा ?

धन्नो : (अकड़ से) जी हां, मजाक है, मुझपर बरस पड़ना ?
 लाला की अकल न ठिकाने कर दूं तो मुझे कहना । समझ
 क्या रक्खा है उसने मुझे ! उसकी मां के मरने के बाद
 मैंने ही तो उसे पाला था ।

[तभी रामसिंह नशे में चूर आता है ।]

रामसिंह : यह पालने-वालने की क्या बातें हो रही थी, काकी !

धन्नो : आओ बेटा, बैठो । मैं कह रही थी कि यह छोटा-सा
 था, जब इसकी मां मर गई थी । तबसे मैंने ही इसे पाला
 है ।

रामसिंह : (बिगड़कर) हां-हां, पाला होगा, पर इसमें ऐसी
 अहसान जताने की कौन-सी बात है । जब देखो तब तुम
 यही बात कहती रहती हो !

धन्नो : अरे बेटा, मैंने ऐसी बात तो नहीं कही, जिसपर तुम
 इतने बिगड़ उठो । खैर, जो तुम्हारी मर्जी ! अगर तुम्हें
 बुरा लगता है तो मैं तुम्हारे घर नहीं आया करूंगी ।

रामसिंह : नहीं आया करोगी तो मत आया करो । बात तो
 ऐसे करती है, जैसे इसके आये बिना मेरा काम ही नहीं
 चलेगा ।

कस्तूरी : आज क्या हो गया है, तुम्हें, जो बिना बात लड़े जा
 रहे हो !

रामसिंह : बिना बात लड़े जा रहा हूं ! बहुत ठीक, तो सुनो
 मैं बहुत दिनों से देख रहा हूं कि यहां लोग मेरे पीछे
 आ-आकर मेरी हंसी उड़ाते हैं, तुमसे झूठ-सच बातें

भिड़ाते हैं ।

कस्तूरी : कोई मैं दूध-पीती बच्ची हूं, जो दूसरों के बहकावे में आ जाऊंगी ।

धन्नो : अच्छा भैया, अब तो माफी दे दो । आज के बाद फिर कभी तुमने मुझे अपने घर में देखा तो कहना ! (गला भर आता है) अच्छा बेटा, भगवान् तुम्हें राजी रखे । खुश रहो । (जाती है)

कस्तूरी : तुमने यह अच्छा नहीं किया । काकी बेचारी बड़ी दुखी होकर गई हैं । तुम्हें कम-से-कम उनकी बड़ी उमर का तो खयाल रखना चाहिए था ।

रामसिंह : मुझे किसीकी परवा नहीं । ला, रोटी ला, मुझे बहुत जोर की भूख लगी है । तुमने खाई कि नहीं ।

कस्तूरी : बस, तुम्हारा ही इन्तज़ार कर रही थी ।

रामसिंह : इसमें मेरा इन्तज़ार करने की क्या बात थी ! मैंने तुमसे कितनी बार कहा है कि खाने-पीने में मेरी राह मत देखा करो ।

कस्तूरी : तो और क्या करूं ?

रामसिंह : अच्छा, जा जल्दी कर । मुझे अभी फिर जाना है । मैं बहुत जल्दी में हूं !

कस्तूरी : कहां जाना है ?

रामसिंह : तुझे हर बात बतानी जरूरी है क्या ?

कस्तूरी : तब फिर इस आने से तो न आना ही अच्छा था !

रामसिंह : मैं बहस नहीं करना चाहता, कस्तूरी । मैं जो काम

कहता हूं, वह करो। जल्दी से मुझे पचास रुपये निकाल-
कर दो। मुझे चिम्मा की बैठक पर जाना है। वे लोग
मेरा इन्तज़ार कर रहे होंगे।

कस्तूरी : (व्यंग्य) हूं, तो यह कहों कि अब इस बीमारी को
• शहर से उठाकर गांव में भी ले आये हैं। गांव में तो
थोड़ी-बहुत इज्जत बनी हुई है, वह भी आपको अच्छी
नहीं लगती। (समझाते हुए) किसीकी बैठक-ऐठक में
जाने की ज़रूरत नहीं है।

रामसिंह : (गुस्से से) कस्तूरी !

कस्तूरी : मैं ठीक कह रही हूं। आपको अपनी इज्जत का
ध्यान नहीं है तो न सही, पर मुझे तो है। बेटी ब्याहने
लायक होगई है। लड़के की पढ़ाई को रुपया चाहिए।
ये सब काम कैसे होंगे। अगर तुम्हारी ये आदतें रोज़-
बरोज़ बढ़ती गई तो एक दिन यह घर बरबाद होकर
रहेगा। दो साल होने को आये, खेतों में एक दाना नहीं
उगा। जो खेत सोना उगलते थे, अब मिट्टी बनकर रह
गये हैं। तुमने कभी इन बातों पर भी सोचा है ?

रामसिंह : अच्छा-अच्छा ! ज्यादा बातें मत करो। मैं जो कह
रहा हूं, वह करो। इन बातों पर फिर कभी सोचूंगा।

कस्तूरी : सोचेंगे आप खाक। आपने इस घर को घर समझ
रखा होतब न ! सुनिये, शहर की आदत-वादत की दुकान
पर लगाइये आग। यहां रहकर अपनी खेती-बाड़ी शुरू
कीजिये।

रामसिंह : कस्तूरी, मुझे दीखता है कि आज तुम्हारी पिटने की इच्छा है ।

कस्तूरी : यह कोई नई बात नहीं है, मेरे लिए । तुम्हारी दया से अब मार खाने की आदत-सी पड़ गई है । इच्छा हो तो आज भी अपने अग्रमान निकाल लो । *

रामसिंह : कस्तूरी !

कस्तूरी : मैं कहती हूँ, वे लोग मिल-जुलकर आपको लूट रहे हैं । अच्छा, लो रोटी खालो ।

रामसिंह : अब मैं रोटी-बोटी कुछ नहीं खाऊंगा । मुझे वहाँ जाने की जल्दी है । कहीं वे लोग वहाँ से चले न जायं ! यह न समझ लें कि मैं मैदान छोड़कर भाग गया । आखिर इन्सान की जुबान भी तो कुछ होती है !

कस्तूरी : (व्यंग्य) बहुत खूब ! इन्सान की जुबान की कीमत भी अब जुए, शराब और दूसरी बुरी बातों में ही तो रह गई है ! उस समय तुम इन्सान की जुबान की कीमत भूल जाते हो, जब मेरे सामने खाई हुई ये कसमें कि अब मैं कभी शराब नहीं पियूंगा, अब मैं कभी जुआ नहीं खेलूंगा, कुछ ही देर में थोथी साबित हो जाती है !

रामसिंह : बस कस्तूरी, मेरे सबर की हद हो चुकी है ।

कस्तूरी : और मेरी भी । तुम आखें रखते हुए भी अन्धे बने हुए हो । मेरे पास रुपयों की खान नहीं लगी हुई है । धीरे-धीरे तुम मेरा सब सोना भी बेचकर खा गये हो । बाप के यहां से जो कुछ लाई थी वह भी स्वाहा हो गया ।

तुम यह सबकुछ जानते हुए भी कि मैं सुबह से शाम तक दूसरों का अनाज पीसती हूँ, सूत कातती हूँ, तब कहीं जाकर अपना और अपने बच्चों का पेट पालती हूँ, अनजान बने हुए हो। मैं समझती थी, तुम्हें किसी दिन अपनी करनी पर शर्म आयगी। पर अब तो मुझे पक्का यकीन है कि तुमने अपनी शर्म घोलकर पी ली है।

रामसिंह : क्या बकती हो ? क्यों करती हो यह सब काम, गांववालों का ! काम करने से पहले तुम कहीं डूब मरतीं तो अच्छा होता। अपनी बनी-बनाई इज्जत पर कालिख पोतने से पहले तुम्हें मौत भी नहीं आई।

कस्तूरी : मौत आ जाय तो और फिर चाहिए ही क्या ! अभी तो हर बात पर पर्दा पड़ा हुआ है। पर आखिर तो एक-न-एक दिन यह बात गांववालों के आगे खुलेगी ही। बेचारी धन्नो काकी अपने नाम पर गांववालों से काम लाकर मुझे देती हैं। पर कबतक चलेगा यह सब ?

रामसिंह : अच्छा, कल सुबह इन सब बातों पर विचार करूंगा। उस धन्नो की बच्ची से भी निबटूंगा। बस, अब तू जल्दी से मुझे पैसे निकालकर दे, नहीं तो मेरा हाथ खुल जायगा।

कस्तूरी : खुलने दो अपना हाथ। मैं अपने हाथों अपने बच्चों के पेट पर लात नहीं मार सकती।

रामसिंह : (थप्पड़ मारकर) बड़ी आई बच्चोंवाली ! मार-मारकर हड्डियां न तोड़ दूं तो मेरा नाम रामसिंह नहीं। सीधी तरह से बता, किस संदूक में रुपये रखे हैं (पीटता है)।

कस्तूरी : (रोते हुए) मुझसे क्या पूछते हो ! सब सन्दूक तुम्हारे सामने हैं । तोड़ लो, खोल लो, देख लो ।

रामसिंह : तालियां कहां हैं, इन सन्दूकों की ?

कस्तूरी : मुझे नहीं मालूम ।

रामसिंह : हां-हां, तुम्हे काहे को मालूम होगा । अच्छी बात है ! (ताले पर पत्थर मारता है) दिन निकलने दे एक-एक से गिन-गिनकर बदला चुकाऊंगा ।

[गोपाल दूसरे कमरे से जागकर आता है ।]

गोपाल : पिताजी ! पिताजी ! आप आ गये ।

रामसिंह : चुप रह, पिताजी के बच्चे, नहीं तो यह पत्थर तेरे सिर पर दे मारूंगा ।

कस्तूरी : ले, खाले पिताजी के साथ रोटी । अभागा कहीं का ! तेरे लिए यह तमाशा देखने को बाकी था, सो आज तूने भी देख लिया ।

रामसिंह : (चीखकर) तेरी यह कैंची की तरह चलती जबान बन्द होगी कि नहीं ? चुप हो, नहीं तो यह पत्थर तेरे सिर पर दे मारूंगा ।

कस्तूरी : तो फिर मेरा मुंह क्या देख रहे हो । दे मारो न ! लो, यह मेरा सिर हाज़िर है । (पत्थर से ताला टूट जाता है और रामसिंह सन्दूक खोलता है ।)

रामसिंह : समझती थी, यह ताला टूटेगा ही नहीं । हूं, तो यह है गहने की पोटली ! यह है रुपये की गांठ ! (अट्टहास) अब देखूंगा, मेरे साथ जुए में कौन जीतेगा ! हाथ में खुला

धन हो तब जुआ खेलने का मजा आता है ।

कस्तूरी : (पोटली छीनती हुई) भगवान् के नाम पर इस बच्चे पर रहम करो । हमें अब भीख मांगने पर मजबूर न करो ।

रामसिंह : हट जाओ मेरे रास्ते से ।

कस्तूरी : नहीं, मैं अपने जीतेजी यह नहीं होने दूंगी । (रोती है ।)

गोपाल : पिताजी ! पिताजी ! आप कहां जा रहे हैं ? मैं आपको नहीं जाने दूंगा । (पैरों से लिपट जाता है) । मां, तू मत रो । मैंने पिताजी को पकड़ लिया है । अब नहीं जा सकते ।

रामसिंह : परे हट, (उठाकर फेंकता है) ले, अब तो छोड़ेगा मेरा रास्ता । (अट्टहास) बड़ा आया तीसमारखां का बच्चा ! (जाता है ।)

कस्तूरी : हाय राम, यह क्या अनर्थ हो गया ! यह बाप हैं या कसाई ! अब हम अनाथों का यहां क्या होगा ! (बच्चे को गोद में उठाकर रोती । तभी फिर धन्नो काकी आती है ।)

धन्नो : बहू ! बहू ! क्यों क्या हुआ ! अरे राम, यह क्या ! गोपाल को क्या हुआ ? उसके सिर से खून कैसे निकल रहा है । मैं सब-कुछ देख-सुन रही थी, बेटी ; पर मजबूर थी । कम्बस्त कैसा राक्षसों की तरह हँसता गया है । हिम्मत रख बेटी, इस तरह के रोने-धोने से कुछ नहीं होगा । लड़के के मुंह में गर्म दूध डाल, जिससे उसे होश आये ।

कस्तूरी : दूध यहां कहां धरा है, काकी !

धन्नी : ठहर, मैं अभी आई। तू रो मत। भगवान् सब-कुछ देखते हैं। (जाती है।)

कस्तूरी : गोपाल ! गोपाल ! आंखें खोल। (रोती है।) होश में आ। हम आज ही यहां से तेरे नाना के यहां चल देंगे। अब हमारा इस घर में गुजारा नहीं है। (सुबकती है।
धन्नी कटोरे में दूध लिये आती है।)

धन्नी : ले, इसके मुंह में दूध डाल और इसे खाट पर लिटा दे। फिकर मत कर। जल्दी ही होश में आ जायगा। बिरजू भी आया जाता है। अभी खेतों की मेंड बांधकर आया है। (बिरजू आता है।)

बिरजू : क्यों, गोपाल का क्या हाल है, भाभी ? तुम चिन्ता मत करो। भगवान ने चाहा तो मैं सब ठीक कर दूंगा। खाना खाने बैठा ही था कि अम्मा ने बताया। किधर गया है, यह रामसिंह ?

कस्तूरी : चिम्मा-इम्मा की बैठक में आज जुआ लग रहा है। वहीं गये हैं।

बिरजू : मैं अभी वहां जाता हूं। लाला की अकल ठिकाने कर दूंगा।

कस्तूरी : नहीं लाला, ऐसा भूलकर भी मत करना। मुझपर रहम करो। इस वक्त वह गुस्से में हैं, समझेंगे, अपने हिमायती भेजकर मुझपर रौब डालना चाहती है।

बिरजू : अम्मा, तुम गोपाल को दूध पिलाओ। इसमें हिमायत

की कौन-सी बात है ! एक पड़ोसी के नाते, एक गांव-वाले के नाते, मुझे सबकुछ करने का हक है । मैं अभी नम्बरदार के पास जाऊंगा, उन्हें जाकर सारी कहानी सुनाऊंगा । चिम्मा-इम्मा जैसे आदमियों को इस गांव में नहीं रहना चाहिए । किसीका घर बरबाद हो रहा हो और हम खड़े तमाशा देखते रहें, यह कहांतक उचित है ! कम्बख्त ने डेढ़-दो साल में ही सोने जैसी गृहस्थी को मिट्टी बनाकर रख दिया ।

धन्नो : एक दिन था जब गांववाले इसकी तारीफ करते नहीं थकते थे । आज कोई भी उससे बात करना नहीं चाहता, सिवा इन पांच-चार लफंगों के । तुम जाओ, उसको जाकर देखो । कहीं मिल जाय तो समझा-बुझाके घर ले आना ।

बिरजू : अच्छा अम्मा, मैं जाता हूं । वैद्यजी को भी भेजता जाऊंगा । गोपाल को देखते जायंगे । (कहते-कहते जाता है ।)

धन्नो : बहू, रो मत । भगवान् ने तेरी सुन ली है । गोपाल ने आंखें खोल दी ।

गोपाल : अम्मा, पिताजी कहां गये हैं ?

कस्तूरी : बेटा, दूध पी ले, और चुपचाप सो जा । सबेरे, तुमको तुम्हारे नाना के यहां ले चलूंगी । अब वहीं रहेंगे हम ।

धन्नो : बहू, यह तू क्या कह रही है ! यह तूने क्या सोचा है ?

कस्तूरी : मैंने ठीक ही सोचा है, काकी । आज तो बच्चे का

सिर फटा है, किसी दिन नशे में वह जान भी ले सकते हैं ।

धन्नो : पर बेटी, तुम्हारा यहां रहना बहुत जरूरी है, नहीं तो किसी दिन तुम्हें अपनी इस बात पर पछताना पड़ेगा ।

कस्तूरी : सबकुछ समझती हूं, काकी । पर अब मैं मजबूर हो गई हूं । उनके इस वहशीपन से डर गई हूं ।

धन्नो : तेरे पिता इतने अमीर नहीं हैं कि तुम लोगों को पाल सकें । वे इस उमर में अपना और तेरी बुढ़िया मां का पेट ही मुश्किल से भर पाते हैं । चम्पा वहां पहले ही से है । तुम दोनों भी वहां पहुंच जाओगे तो इतना बोझ वह कैसे सम्भाल पायेंगे ।

कस्तूरी : इसमें बोझ काहे का है, काकी ! मुझे सिर छुपाने भर को जगह चाहिए । मेहनत-मजूरी करके अपना और अपने बच्चों का पेट भर सकती हूं । मैं बापू पर बोझ नहीं बनूंगी ।

धन्नो : हाय री किस्मत ! वह भी क्या सोचेंगे, मेरे कहने से ही उन्होंने तेरी शादी यहां की थी ! (सांस भरकर) यह सब मेरा ही दोष है, बेटी ।

कस्तूरी : इसमें अपनेको क्यों कोसती हो, काकी ! जब तुमने शादी कराई थी, तब तो इनमें कोई ऐब नहीं था । यह तो शहर में जाकर अन्धाधुन्ध कमाने की हविश ने इनका सत्यानाश कर दिया ।

धन्नो : भगवान की बातें भगवान ही जानते हैं, बिटिया ! सोना बनाने गया था, मिट्टी लेकर आया ।

कस्तूरी : अपनी-अपनी तकदीर है, काकी !

धनो : तू धीरज रख । भगवान के यहां देर हो सकती है, पर अन्धेर नहीं । मिट्टी को सोना करते उसे देर नहीं लगती । कौन जाने, तुम्हारे फिर अच्छे दिन आ जायं । अब हमीं-को लो । बिरजू पहले इसीके खेतों पर काम करता था । इससे भगड़ा हो गया । इसने हमें अलग कर दिया । तुम तो सब कहानी जानती हो, बेटी । नम्बरदार की मेहर-बानी से बिरजू को कुछ बीघे जमीन जोतने को मिल गई । अपनी मेहनत और ईमानदारी से अब हम पहले से अच्छा ही खाते-पीते हैं । मेहनत से काम करने पर जमीन सोना उगलती है ।

कस्तूरी : इसी बात का तो रोना है, काकी । अपने खेत न खुद जोतते हैं और न किसीको जोतने देते हैं । दुकान के नाम पर शहर में सट्टा खेलने का ढोंग बना रखा है ।

गोपाल : अम्मा, मैं पढ़ना छोड़ दूंगा । अब मैं अपने खेतों को सम्भालूंगा ।

कस्तूरी : हां, अब हम यही करेंगे । पर तू पहले पढ़-लिख ले । पढ़ा-लिखा किसान और भी अच्छा होता है । फिर यह तेरे छोटे-छोटे हाथ अभी हल की मूँठ कहां पकड़ सकेंगे, बेटा । अब तू सो जा । तुझपर मेरी बड़ी-बड़ी उम्मीदें हैं ।

[कुछ देर बाद बिरजू आता है । साथ में नम्बरदार भी है ।]

बिरजू : भाभी, चिम्मा-इम्मा किसीकी बैठक में तो ये लोग दीखे नहीं । ताऊजी भी मेरे साथ-साथ घूमते रहे ।

नम्बरदार : तू दुःखी मत हो, बहू । दिन निकल आने दे । मैं सब ठीक कर दूंगा । गांव में मेरे होते जुआ नहीं चल सकता । जबतक मैं जिन्दा हूं तबतक यह बीमारी गांव-वालों को नहीं लग सकती ।

घन्नो : पर यह तो कल अपने बापू के यहां जाने की बात कर रही है ।

नम्बरदार : हूं ! यह कभी नहीं हो सकता । मैं अपने गांव के सुख-दुःख की बातें दूसरे गांव में नहीं जाने देना चाहता । तू मुझपर यकीन कर, बिटिया । अब तुझे यहां कोई कष्ट नहीं होगा । तू समझ ले, मैं तेरा बापू यहीं तेरे पास हूं ।

कस्तूरी : यह तो आपकी मेहरबानी है, ताऊजी । पर मैं चाहती हूं कि वह भी इस बात को महसूस करें कि उन्होंने हमारे साथ ज़्यादती की है । देख रहे हैं आप । बच्चे का क्या हाल करके गये हैं ।

बिरजू : ओहो, रामसिंह को ढूँढने की जल्दी में वैद्यजी के घर जाने का ध्यान ही न रहा । अभी जाता हूं ।

घन्नो : अब तो गोपाल होश में है ।

गोपाल : दर्द बड़ा हो रहा है, अम्मा, और मुझे भूख लगी है ।

नम्बरदार : क्यों बहू, इसे रोटी क्यों नहीं खिलाई ? जा बिरजू, मेरे घर से भागकर रोटी ले आ ।

कस्तूरी : वह तो सब आपकी दया है, ताऊजी । रोटी तो कभी की बनी पड़ी है । ज़िद्द कर रहा था कि पिताजी के साथ खाऊंगा । अपने पिता को प्यार करने का उसे यह नतीजा मिला है ।

नम्बरदार : तुम्हारी गलतियां तुम्हारे सामने आ रही हैं। ब्रिटिया ! बात जब यहां तक बढ़ गई तो हमारे सामने आई । तू हमसे हर बात को छिपाती रही, यह समझकर कि रामू की बदनामी न हो । वह चिनगारी आग बनती गई (लम्बी सांस लेकर) और अब इसे एकदम सख्ती से बुझाना होगा, नहीं तो उन चार-पांच आदमियों के कारण सारे गांव में इन बीमारियों के फैल जाने का डर है । सबेरा होते ही मैं सबका दिमाग ठिकाने लगा दूंगा ।

धन्नो : रामू के खेत रहन पड़े हैं । और जो अपने पास थोड़े-बहुत हैं, दोस्तों को बटाई पर दे रखे हैं । वे इसके पल्ले कुछ नहीं डालते । आप इस बात का कुछ इन्तज़ाम कर दीजिये ।

नम्बरदार : हमसे कोई बात करे, तब न धन्नो ! आज पता लगा है । सब ठीक कर दूंगा । वैसे कानों में कुछ भनक तो पहले भी पड़ती रही है, पर ठीक बात का पता नहीं लग पाया था । अरे बिरजू, जरा बगिया में जाकर तो देख । कहीं वहां न इन लोगों ने जुआ का अड्डा बनाया हो ।

बिरजू : विचार तो कुछ मेरा भी ऐसा ही है, ताऊजी । अच्छा

तो मैं जाऊं ?

नम्बरदार : चल, मैं भी तेरे साथ चलता हूं ।

बिरजू : आप क्या करेंगे इस अन्धेरे में चलकर । बूढ़ा शरीर, कहीं ठोकर लग गई तो वैसे ही लेने के देने पड़ जायंगे । मैं अभी आता हूं, पता लगाकर । मुझे तो ऐसा लगता है कि इसमें कुछ बाहरवालों का भी हाथ है ।

नम्बरदार : हो सकता है । कोई बड़ी बात नहीं । जो कुछ भी है, सब पता लग जायगा । पर देखो, अकेले मत जाना । चार-पांच आदमी ले जाना अपने साथ । क्या पता कि वे लोग लड़ने को ही तैयार हो जायं ।

बिरजू : मैं पहले ही यह सब सोचे हुए हूं । अभी कल्लू आदि को साथ लिये जाता हूं ।

नम्बरदार : ठीक, साथ में एक-दो लठैत हों तभी मजा आयगा । मिल जायं तो सबकी मुश्कें बांधकर लाना । अच्छा ।

बिरजू । ऐसा ही होगा । (जाता है ।)

नम्बरदार : अच्छा धन्नो ! मैं चलूं । बात का पता लगाता हूं । कस्तूरी बिटिया, तू कुछ खा-पी ले और गोपाल को भी खिला दे । अपनी तबीयत को ठीक कर । सबेरे ही तेरी सारी ज़मीन किसीको आध-बटाई पर दे दूंगा । हकीम-जी को लेकर आता हूं । गोपाल को दिखा देना चाहिए । इस वक्त ताज़ी-ताज़ी चोट है, ठीक अंदाज नहीं हो रहा है । बाद में कहीं दर्द बढ़ न जाय । (जाते हैं ।)

धन्नो : उठ बिटिया, खाना खाले ।

कस्तूरी : इच्छा नहीं होती, काकी । गोपाल को खिलाये देती हूँ । मैं तो अब उनके आने पर ही खाऊंगी ।

धन्नो : नहीं-नहीं, यह नहीं होगा । (कुछ देर बाद ही बिरजू रामसिंह को लेकर आता है) ।

बिरजू : भाभी, जल्दी से विस्तर लगा । भैया की हालत ठीक नहीं है ।

कस्तूरी : हाय मेरे राम ! यह सब कैसे हुआ ? तुम लोगों ने यह क्या किया ?

बिरजू : हमने कुछ नहीं किया, भाभी, कुछ नहीं किया । पहले मैं जो कह रहा हूँ, वह करो । फिर सारी कहानी सुनाऊंगा । नम्बरदार कहां गये, अम्मा ?

धन्नो : तुम्हारे पीछे-पीछे ही चले गये थे । कहते थे, हकीमजी को लेकर अभी आ रहा हूँ ।

बिरजू : चलो, यह भी अच्छा ही हुआ । हकीमजी को तो बुलाना ही पड़ता ।

[खाट पर रामू को लिटाते हैं । तभी हकीमजी के साथ नम्बरदार आते हैं]

नम्बरदार : क्यों, क्या बात है, बिरजू । पकड़े गये बदमाश ।

बिरजू : हकीमजी, तुम ज़रा भैया को देखो, इनकी हालत बड़ी खराब है । (हकीमजी रामू को देखते हैं ।) बात यह हुई ताऊजी, कि हमारे जाने से पहले ही वे बदमाश इन्हें लूट-पाटकर या जीत-जातकर जो भी समझो, जा चुके थे, और इनका बुरा हाल करके कोनेवाले कुएं के पास डाल

गये थे । यह वहां औंधे मुंह ज़मीन पर बेहोश पड़े थे । हमने बुलवाने की बहुत कोशिश की, पर ये बोले ही नहीं । हमने उनका पीछा करना ठीक न समझा । इनकी बुरी हालत देखकर पहले इन्हें घर लाना ही ठीक समझा ।

नम्बरदार : ठीक किया तुमने । उनसे तो फिर भी निपटा जा सकता है । उन बदमाशों की चमड़ी न उधेड़ दूँ तो मैं नम्बरदार नहीं । रामू, ओ रामू !

रामसिंह : (होश में आते हुए) मैं कहां हूँ । हैं, घर में ! यहां मुझे कौन लाया है ? वह चिम्मा और दूसरे लोग कहां गये ? मैं आज उन सबका खून पी जाऊंगा ।

नम्बरदार : होश में आओ । क्या बहकी-बहकी बातें कर रहे हो । चिम्मा-इम्मा सबसे तुम्हारा बदला हम लेंगे ।

रामसिंह : मैं उन सबसे लड़ा तो बहुत, पर मैं अकेला उन चार-पांच के मुकाबले में कर ही क्या सकता था ?

नम्बरदार : तुम चिन्ता मत करो, सब ठीक हो जायगा, पहले यह बताओ कि गहने और रुपये कहां हैं ?

रामसिंह : उन्हें तो मैं जुए में हार गया, ताऊजी । उन्हींपर तो सारा भगड़ा हुआ ।

नम्बरदार : यह तुमने बहुत बुरा किया, रामू । तुमने खुद अपने पांव पर कुल्हाड़ी मारी । तुमने हम लोगों से कभी किसी बात में सलाह नहीं ली । अपनी बहू और बेटे तक को तुमने अपना दुश्मन समझा । तुम बाप हो या राक्षस ?

देखो तुमने गोपाल की क्या दशा की है ? कितनी खराब हालत है इसकी ? ईश्वर न करे अगर इसे कुछ हो जाय, तब क्या होगा ? तुम्हें शर्म आनी चाहिए, रामू ।

रामसिंह : (रोता हुआ) गोपाल ! गोपाल ! कंसी तबीयत है, बेटे ?

नम्बरदार : लक्ष्मी-सी बहू हमने तुम्हें लाकर दी और तुम उसे मिट्टी में मिला रहे हो ।

धन्नो : वह कल अपने मायके जा रही है ।

रामसिंह : क्यों, ऐसी क्या बात होगई ?

धन्नो : यह अपनी करतूतों से पूछो । कुछ देर पहले इसका खून किये दे रहे थे ।

रामसिंह : शराब ने मुझे अन्धा कर रखा था, काकी ।

नम्बरदार : तो जा, और पी आ दो-चार चुल्लू । मैं पूछता हूं, तू आदमी बनकर रहना चाहता है कि नहीं ? आज के बाद कभी मैंने सुना कि तूने बहू और बेटे पर हाथ उठाया है तो मुझसे बुरा कोई नहीं होगा । शहर की दुकान का जो तूने ढोंग बना रखा है, उसे छोड़ ।

बिरजू : वह तो थोड़े दिनों में खुद ही बन्द हो जायगी । उसमें अब रखा क्या है !

नम्बरदार : और कस्तूरी बेटी, तू हम गांववालों पर यकीन कर । आगे तुझे इसके खिलाफ कोई शिकायत हो तो हमें बताना । तू समझ ले, यहां तेरे बापू मौजूद हैं । रामू, तू मर्द होकर बच्चों की तरह रो रहा है । बहू से वादा

कर कि आगे उसे प्यार से रक्खेगा और अपना पूरा ध्यान खेती-बारी पर लगावेगा ।

रामसिंह : ऐसा ही होगा, ताऊजी । मैंने अपनी सोने-सी ज़मीन को मिट्टी बना रक्खा है । अब मैं इसी मिट्टी में से सोना पैदा करके दिखाऊंगा । बिरजू, तू मेरा साथ देगा । भैया मेरी-तेरी आध-बटाई रही ।

बिरजू : मैं तुम्हारा पहले जैसा ही बिरजू हूँ, भैया । जो चाहोगे वही होगा ।

धन्नो : रामू, क्या अब भी यही मानते हो कि मैंने तुम्हें नहीं पाला था ?

रामसिंह : मुझे माफ़ करो, काकी । तुम भी माफ़ करो, कस्तूरी । मैं आप सबके सामने बहुत ही शर्मिदा हूँ । अब मेरी आंखें खुल गई हैं ।

[काकी स्नेह से रामू के माथे पर हाथ फेरती है ।]

[पटाक्षेप]

: ५ :

मेल-मिलाप

पात्र

मंगलसिंह	: गांव का एक खाता-पीता किसान
किशनसिंह	: मंगलसिंह का चचेरा भाई
रघुराजसिंह	: गांव का एक बेकार, मंगलसिंह का दोस्त
हीरा पंडित	: गांव का पुरोहित
राधा	: मंगलसिंह की पत्नी
चन्दो	: किशनसिंह की पत्नी
रामू	: मंगलसिंह का बेटा

पहला दृश्य

[स्थान : गांव का एक गलियारा । एक ओर को मंगलसिंह की चौपाल । गलियारे के दूसरी ओर किशनसिंह की । दोनों की चौपालों के आगे चबूतरे । चौपालों के भीतर से ही घरों में भी रास्ते निकल जाते हैं, वैसे ये चौपालें दोनों के मकानों के पिछवाड़े हैं । किशन की चौपाल का दरवाजा बंद है । मंगलसिंह अपनी चौपाल के चबूतरे पर बैठा हुक्का पी रहा है । नेपथ्य में बेलों की घंटियों की आवाज । साथ ही कुछ दूरी पर शहनाई का स्वर । राधा का प्रवेश]

राधा : (समझाते हुए) मैं कहती हूँ, कुछ तो समझ से काम लो। इस तरह से हठ करना ठीक नहीं। किशन की बेटी की शादी है। तुम न पहुँचे तो दुनिया क्या कहेगी !

मंगल : किशन मेरा क्या लगता है, जो उसके यहां न जाने पर दुनिया मुझे कुछ कहने आयेगी ?

राधा : कैसी बात करते हो ! चाचा के लड़के और सगे भाई में क्या अन्तर होता है ! फिर बेटियां तो सबकी साझी होती हैं। मैं कहती हूँ, गुस्सा दिखाने के और भी बहुत मौके आवेंगे ज़िदगी में। लोग कहेंगे—बेटी का ब्याह था, कुछ देना पड़ जाता, इसीलिए नहीं आये।

मंगल : लोगों को जो कहना है, कहते रहें, मैं किसीका दिया नहीं खाता। जो इच्छा होगी, करूंगा। और तुम्हें भी बता दूँ—मुझे तेरे व्याख्यान की जरूरत नहीं है।

राधा : हाय राम ! तुम तो बिना बात ही बिगड़ उठते हो ! देखो, बिरादरी का मामला है। आज तुम न जाओगे उसके यहां तो कल वे भी तुम्हारे यहां नहीं आयेंगे। आखिर तुम्हें भी तो बेटे-बेटियों की शादी करनी है। तीन-चार महीने में ही सीता की शादी होनी है। देख लेना, फिर कौन आता है, तुम्हारे यहां।

मंगल : अच्छा, ज्यादा बातें मत बना। कोई नहीं आता तो न आये। जा ज़रा आग ले आ। चिलम ठण्डी होने लगी है। बिरादरी, बिरादरी ! बिरादरी न हो गई, भूत हो गया। मैं नहीं करता परवा बिरादरी-फिरादरी की।

राधा : फिर कहोगे कि मुझे व्याख्यान दे रही है। पड़ोस की परवा नहीं करते तो क्या गांव से भी तुम्हारा कोई सरोकार नहीं है ? गांव को छोड़कर जंगल में बस जाना चाहते हो क्या ? आखिर हमें गांव में ही तो रहना है। इनके साथ मिलजुलकर नहीं रहोगे तो कैसे काम चलेगा ?

मंगल : अपना तो सब काम आनन्द से चल रहा है। भगवान् की कृपा चाहिए।

राधा : शहरवाली आदत की दुकान के बलबूते पर फूले-फूले फिरते हो। जिसे गांव में रहना है उससे पूछो। याद रखना, तुम जिनके बहकावे में आ रहे हो, वे तुम्हारे दोस्त नहीं हैं। वे किशन से अपनी पुरानी दुश्मनी निकाल रहे हैं और बदनाम हो रहे हो तुम।

मंगल : चार अक्षर क्या पढ़ लिये हैं तुमने, अपने-आपको जाने क्या समझ बैठी हो ! बाप के जमाने का भगड़ा है। उसे भुलाकर कैसे शामिल हो जाऊं बारात की आगवानी में। संगी-साथी सुनेंगे तो क्या कहेंगे ?

राधा : भाड़ में भोंको ऐसे साथियों को, जो दूसरों की बनती देखकर रोते हैं। ऐसों ही के कारण तो गांव की जिंदगी बरबाद हो रही है। इसको उससे लड़ा, उसको इससे लड़ा, यही तो काम है उनका। मैं कहती हूं, तुम्हारे पास पैसा है तो यह सब तुम्हारे बने हुए हैं। आफ़त पड़ने पर इनमें से एक भी साथ नहीं देगा। क्या करते हैं ये तुम्हारे रघुराजसिंह ? यही न कि लाठी ली, तेल चुपड़ लिया,

किसीकी बाड़ में आग लगा दी, लोगों के घरों में भगड़े करवा दिये ! उसने ज़रूर तुम्हें किशन के यहां शादी में जानै से रोका होगा ।

मंगल : यह लो, बिना बात ही उस भले आदमी पर बरस पड़ी । भला उसे क्या पड़ी है, जो वह हमारी घरेलू बातों में पड़े ! मेरे न जाने से कौन किशन की बेटी की शादी रुक जायगी !

राधा : यह तो ठीक है, पर आदमी का अपना फर्ज होता है कि ऐसे मौकों पर अपने पड़ोसियों को, गांववालों को, साथ-वालों को मदद दे । उनके काम में हाथ बंटाये । बात असल में यह है कि तुममें मदद की भावना ही नहीं है । किसीका साथ देना तुम्हारी आदत में ही नहीं है । इतनी अकड़ तुममें तुम्हारे पैसे ने भर दी है ।

मंगल : हो सकता है । पैसे का गुमान किसे नहीं होता ! फिर किशन के पास भी तो पैसा कम नहीं है । अपनी इन फालतू बातों को छोड़ो ! उनके पीछे चिलम में आग रखना भी भूल गई ।

राधा : अच्छा, मैं फालतू बातें कर रही हूं ! आज न सही, किसी दिन इन बातों की कीमत जानोगे । (चिलम में आग भरकर लाती है । नैपथ्य में शहनाई) मैं कहती हूं, अब भी मान जाओ । अब भी कुछ नहीं बिगड़ा ।

मंगल : जाओ, मुझे चैन से हुक्का पीने दो । एक बार नहीं सौ बार कह दिया, नहीं जाऊंगा, नहीं जाऊंगा ! तुमसे भी कहे देता हूं, वहां गई तो मुझ-सा बुरा और कोई नहीं

होगा ।

(नैपथ्य से) मंगलसिंह है क्या ?

मंगल : (ऊँचे स्वर से) आ जाओ भाई, रघुराजसिंह ! अच्छा, अब तुम जाओ, रघुराजसिंह आ रहा है । (राधा जाती है, रघुराज आता है, शवल-सूरत से ही उसका काइयांपन झलक रहा है) ।

रघुराज : कहो भाई, क्या हो रहा है ?

मंगल : कुछ भी नहीं । अभी हुक्का पीने बैठा था कि तुम आ गये । तुम सुनाओ, बाहर की क्या खबरें हैं ? किशन के यहां क्या हो रहा है ?

रघुराज : बस अभी बारात की अगवानी होकर हटी है । तुम्हारे वहां न पहुंचने की बड़ी चर्चा है ।

मंगल : सो तो होगी ही । गांववालों का ख्याल था कि इस लड़की के विवाह पर सब झगड़े निपट जायेंगे । हमारे खानदान में कितनी ही पीढ़ियों बाद एक लड़की का ब्याह हो रहा है ।

रघुराज : तुम अपनी बात के पक्के निकले ! मैंने तो कह दिया था सबके बीच में कि चाहे आकाश धरती पर आ जाय, पर मंगलसिंह ब्याह में शामिल नहीं होने का । (रुककर) क्या बात है, आज किशन ने इधर का दरवाजा नहीं खोला ?

मंगल : सब बड़े दरवाजे की ओर लगे हुए होंगे, बारात के चक्कर में । हो सकता है, उसने यह भी सोचा हो कि

हम उनके ठाट-वाट न देखलें । लो, हुक्का पियो । थोड़ी देर पहले किशन आया था, पर मैंने साफ़ कह दिया कि मैं नहीं आने का । मैंने रघिया को नहीं बताया कि किशन आया था, नहीं तो वह सिर-दर्द बनकर चिपट जाती ।

रघुराज : (हुक्का पीते हुए) रघिया ने तो कहा होगा तुमसे जाने के लिए । न जाने क्यों, अपनेको तो तुम्हारी पत्नी से बड़ा डर लगता है । है कुछ अक्खड़-सी । कौन जाने कब डांट दे ! परसों की बात है । तुम शहर गये थे । छिद्दा यहां था नहीं । हम लोगों ने सोचा कि चलो, तुम्हारी बैठक में ही कुछ देर बैठकर समय काट लें और कौड़ियां फेंक लें । रामू यहां बैठा था । हम भी आ बैठे । तुम्हारी घरवाली को पता लग गया । लड़के से कहलवा दिया कि यहां से उठकर चले जायं, इसीमें भला है । यह भले आदमियों के बैठने की जगह है । भैया, बात लगी तो बुरी, पर सबर का घूंट पीकर चले गये ।

मंगल : हां भाई, वह है ही कुछ सख्त तबीयत की । बात यह है कि स्त्री से हर वक्त लड़ाई करके भी घर का गुजारा नहीं चलता ।

रघुराज : यह तो ठीक है, पर फिर भी औरत को ज़रा डरा-धमकाकर ही रखना चाहिए । चलो, थोड़ा घूम-फिर आयें । हीरा पंडित की चौपाल पर ही चलकर बैठें । वहां से बारात का तमाशा भी देखते रहेंगे और बात-चीत में समय भी कट जायगा ।

मंगल : तुम्हारा कहना ठीक है । तुम चलो । मैं राधा से कहकर आता हूँ ।

[रघुराज जाता है, मंगल चौपाल की सांकल अंदर से लगा लेता है ।]

दूसरा दृश्य

[स्थान वही, पर अबकी बार किशन की बंठक का दरवाजा खुला है । बाहर चबूतरे पर लालटेन जल रही है । एक-दो बच्चे खेल रहे हैं, तभी किशन और चन्दो आते हैं]

किशन : जाओ रे, कहीं और जाके हुड़दंग करो । चलो, घर के भीतर जाकर खेलो ।

चन्दो : व्याह-शादियों में ऐसा ही होता है । रामजी की दया से सब काम अच्छा ही हो रहा है, पर आज औरतों में बड़ी चर्चा है कि जेठजी व्याह में शामिल नहीं हुए ।

किशन : आदमियों में भी सबके मुंह पर यही बात है, पर लोग तो हमें ही दोषी समझते हैं । उनका ख्याल है कि हम उनसे कहने ही नहीं गये । किस-किसको समझाते फिरें ! मैं तो मंगल से बात भी करने को तैयार नहीं था, पर तुम्हारे बार-बार कहने से गया । सोचता हूँ, तुम ठीक ही कहती थीं, इन बेसिर-पैर की दुश्मनियों से क्या लाभ । पर वह इतनी बुरी तरह पेश आया कि क्या बताऊँ ?

चन्दो : चलो जी, हमने अपना फर्ज पूरा कर दिया । किसीसे हमें क्या ! बेटियां सबकी होती हैं । न कहना भी तो बुरा लगता । और मेरा तो अंदाज था कि यह दुश्मनी आगे के लिए मिट जायगी ।

किशन : कोई बात नहीं । अभी उनके दिमाग में यह बात नहीं आई तो क्या हुआ । अपने-आप कुछ दिनों के बाद समझ जायंगे । अगला जमाना ऐसा आ रहा है कि आदमी का अकेले जीना दूभर हो जायगा । अड़ोस-पड़ोस की तो कौन कहे, गांव-के-गांव एक कुनबा बनते जा रहे हैं । मिल-जुलकर खेतियां होने लग गई हैं और आगे एक दिन ऐसा आयगा जब ये पानी-वानी के भगड़े बिल्कुल ही खत्म हो जायंगे ।

चन्दो : सो तो है ही । उनका न आना इतना नहीं अखरता, पर पता नहीं राधा भाभी क्यों नहीं आई ।

किशन : मंगल ने रोक दी होगी, नहीं तो राधा भाभी जरूर आतीं । उन्हींके कारण आज इतना भी है कि तुम दोनों आपस में बोल लेती हो । बच्चे भी मिल-जुल के खेल लेते हैं । पुरानी सिर-फोड़ बातें दब गई हैं ।

चन्दो : सो बात तो है ही । सीता ननिहाल गई है । यहां होती तो जरूर आती । उसके मामा कुछ ज्यादा बीमार हैं । राधा बहन भी जा रही थी । लक्ष्मी के व्याह के लिए ही रुक गई, एक-दो दिन ।

किशन : आखिर भाभी है बड़े घर की बेटी । खानदान का कुछ-

न-कुछ असर तो होता ही है ।

चन्दो : मैंने एक बात तुमसे छिपा रखी थी, डर के मारे ।
उस दिन राधावहन लक्ष्मी के लिए दो जोड़े कपड़े दे गई थीं । मैंने बहुत मना किया, पर मानी नहीं । बोलीं, जैसी मेरे लिए सीता, वैसी लक्ष्मी । भगड़े होंगे तो हमारे-तुम्हारे होंगे । वच्चे तो हम सबके लिए एक-जैसे हैं । जेठजी से छिपकर जहां तक उनसे हो सकता है, हमारा ध्यान रखती ही हैं ।

किशन : मैं सब जानता हूं । इसीसे तो अब मेरे दिल में उन लोगों के लिए इतना प्यार है । तुमने तो यह बात नहीं कही, पर लक्ष्मी ने मुझसे कह दी थी कि ताई दो जोड़े कपड़े दे गई हैं । भला मैं इसमें दुरा क्या मानूंगा !

[इतने में अपनी बैठक का दरवाजा खोलकर राधा आती है]

राधा : बधाई तुम दोनों को !

चन्दो : हमसे ज्यादा तुम्हें ।

राधा : मुझे सबसे पहले । आखिर मैं ताई हूं न लक्ष्मी की ।

चन्दो : देर लगा दी, राधावहन । गली-मुहल्ले की औरतें जाने क्या-क्या कह रही थीं ।

राधा : हमें उनकी बातों पर कान देने की जरूरत नहीं है ।

मैं तो कबकी आ जाती । उनसे कुछ कहा-सुनी हो गई ।

किशन : क्यों, बात बहुत बढ़ तो नहीं गई !

राधा : नहीं तो, बात क्या बढ़ती । वह कलमुहा रघुराज आया और उन्हें अपने साथ ले गया । हीरा पण्डित की

चौपाल पर । वैसे मुझे किसीका डर तो है ही नहीं, फिर भी मैं सब औरतों के बीच आना नहीं चाहती थी । कई ऐसी कुलच्छनियां होती हैं कि उन्हें दूसरों का मिलना भी अखरता है और वे बेकार की बातें बनाकर इधर की उधर फैलाती रहती हैं । ऐसी बातों से बात बनने के बजाय बिगड़ती ही ज्यादा है ।

किशन : सो तो है ही ।

चन्दो : पर मैं तो सौ की एक बात जानती हूं, जलते को जलाओ और हलुवा पूरी खाओ । किसीका दिया थोड़े ही खाते हैं, जो डर के चलेंगे इनसे !

राधा : तू तो ठीक कहती है, पर इन्हें कौन समझाये । अच्छा, तो मैं चलूं । लो, ये पांच रुपये लक्ष्मी को दे देना मेरी ओर से विदा के । मैं उसे ही दे जाती, पर वह अपनी सखी-सहेलियों में घिरी बैठी है ।

किशन : पर इसकी क्या जरूरत थी, भाभी ।

राधा : अजी, तुम मत बोला करो, हमारी घरेलू बातों में ।

किशन : (हँसकर) लो, मैं चुप हुए जाता हूं । चन्दो, जरा लक्ष्मी को बुला ला । दो मिनट को अपनी ताई से मिल लेगी ।

राधा : अच्छी बात है । मिलती ही चलूं, बिटिया से ।

किशन : अच्छा भाभी, मैं चलूं । बारात का इंतज़ाम देखना है । अबतक तो गांववाले ही सब-कुछ कर रहे हैं ।

राधा : हां, हो आओ । बड़ी अच्छी बात है कि गांववाले

सब कर रहे हैं। मैं भी कुछ सालों से देख रही हूँ, हमारे गांव में एक-दूसरे की मदद करने की भावना बढ़ रही है। यह बड़ी खुशी की बात है।

किशन : एक दूसरे के सहयोग से ही ज़िन्दगी है, भाभी। मंगल और रघुराज, इस तरह के दो-चार आदमियों को छोड़कर सभी गांववाले अपने घर की बात समझकर मेरा हाथ बंटा रहे हैं।

राधा : पास-पड़ोस का मतलब ही यह है, भैया।

किशन : उनके यहां ऐसे मौके आयेंगे, भाभी तो मैं भी जी-जान से उनका साथ दूंगा। इसी तरह ज़िन्दगी चलती है। वे मेरे हैं, मैं उनका हूँ। तुम तो जानती ही हो, हीरासिंह ने आमों के दो बाग लगवाये हैं। अबकी बार उसे कोई दिक्कत नहीं हुई। गांव के छोरों ने चुटकियों में सब काम करके धर दिया। महोनों का काम दिनों में हो गया। कोई पूछे, इससे हमें क्या फ़ायदा ? फ़ायदा ! फ़ायदा क्यों नहीं, गांव के आस-पास घनी छाया हो जायगी। गरमी के दिनों की दोपहरियां वहां अच्छी तरह से कटा करेंगी।

राधा : और नहीं तो क्या ! बाहर से आम आता है, महंगा पड़ता है। अपने गांव में होगा तो कुछ तो सस्ता मिलेगा !

किशन : अगर भाभी, इसी तरह से हम आगे बढ़ते चले गये तो एक दिन गांव स्वर्ग बन जायेंगे। मैं भी सोच रहा हूँ, एक छोटी-सी बगिया लगवाने की। बीच में एक पक्की

कुइयां बनवा दूंगा। लोगों के नहाने-धोने के काम आती रहेगी, बगिया में पानी भी लगता रहेगा।

राधा : यह तो बहुत अच्छा विचार है तुम्हारा।

किशन : पहले सोचा था, मंगल से कहूं कि आओ दोनों मिलकर पुरवाईवाले दोनों खेत मिलाकर एक अच्छा-सा बाग बना लें। फिर सोचा, उनके मगज में यह बात बैठेगी नहीं।

राधा : आजकल वैसे भी वह हवा के घोड़े पर सवार हैं। शहर में कोई काम खोल रहे हैं, अपने सगों के साथ मिलकर।

किशन : किन सगों के साथ ? रघुराजसिंह और छिद्दू के साथ ! अरी भाभी, ये तो अपने बाप के भी सगे नहीं निकले, इनके सगे कहां से निकलेंगे। मुझे तो हँसी आती है, जब मैं देखता हूं कि लोग आंखें होते हुए भी उन्हें मूंदकर चलते हैं। उन्हें समझाओ कि इन लोगों के फेर में न पड़ें।

राधा : मेरी कौन मानता है, लाला ! मैं भला किस खेत की मूली हूं।

किशन : अच्छा अब मैं चलूं, भाभी (जाता है)।

राधा : चन्दो, मैं भी चलती हूं। तेरे जेठजी आ गये तो बुरा मनायेगे।

चन्दो : मैं भी जाती हूं।

[दोनों जाती हैं। कुछ ही देर बाद गलियारे में बातें करते हुए हीरा पंडित, रघुराज और मंगल आते हैं]

हीरा : भई, किशनसिंह ने तो ठाठ कर दिये । बारात को ऐसे बढ़िया ढंग से खिलाया-पिलाया कि दूसरे गांववालों के आगे अपने गांव की इज्जत रख ली । लड़केवाले भी तारीफ करते नहीं थकते । कहते हैं, इतना मेल-मिलाप हमने किसी गांव में नहीं देखा । खाना-पीना तो सब जगह होता है, पर इस तरह से प्यार-प्रीति से हरेक का मिलना तो कहीं-कहीं ही देखा जाता है ।

रघुराज : तुम्हें तो आदत है, बिना बात किसीकी तारीफ करने की । मैं जानता हूं, तुम किशन की तारीफ क्यों कर रहे हो, इस समय !

हीरा : क्या जानते हो, जी ?

रघुराज : यही कि किशन की तारीफ करके इस वक्त मंगल-सिंह को चिढ़ाना चाहते हो । व्याह में जो कुछ हुआ है वह हम सब जानते हैं ।

हीरा : खाक जानते हो तुम ! गये भी हो उधर, जिधर बारात ठहरी है । या घरबैठे ही ज्योतिष लगाया करते हो ?

रघुराज : क्या हुआ, थोड़ी-बहुत खातिर कर दी । आदमी कितने आये हैं बारात में ? मुश्किल से बीस-पच्चीस । भला कहीं बीस-पच्चीस आदमियों की भी बारात होती है ?

हीरा : यह तो अपनी-अपनी समझ की बात है । मैं तो कहूंगा, दोनों ने अक्लमंदी की । लड़कीवालों ने भी और लड़के-वालों ने भी । इस महंगाई के ज़माने में सैंकड़ों की बारात

लेकर चलना अक्लमंदी की बात नहीं है ।

रघुराज : तुमने तो कसम खा रक्खी है, किशनसिंह की तारीफ़ करने की । कहीं अच्छी-सी दक्षिणा-वक्षिणा तो नहीं मिल गई, हीरा पंडित ?

हीरा : मुंह सम्भाल के बात करो, रघुराजसिंह ! तुम जैसे हो, वैसा ही दूसरों को भी समझते हो ।

मंगल : इसमें बुरा मानने की क्या बात है, पंडित ।

हीरा : वाह ! बुरा मानने की बात कैसे नहीं । तुम सब जानते हो कि मैं पण्डिताई नहीं करता, खेती-बाड़ी करता हूं । फिर इस तरह की बेतुकी बातें करना बदतमीजी नहीं तो और क्या है ।

रघुराज : अच्छा, तो बदतमीजी ही सही । लो कर लो क्या करते हो !

हीरा : देख रहे हो तुम, मंगल । अब यह बिना कारण ही बात को बढ़ाये जा रहा है । इसका सब गुण्डापन निकाल के धर दूंगा । बाद में दोष मत देना ।

मंगल : आज तो बड़ी जवानी छा रही है । कहीं ज्यादा तो नहीं खा लिया, किशन के यहां ।

रघुराज : मैं बुढ़ा समझकर लिहाज किये जा रहा हूं और यह सिर पर ही चढ़ा चला जा रहा है !

हीरा : बुढ़ा हूं तो क्या, तेरे जैसे तो पांच को अब भी काफ़ी हूं । लाठी बगल में दाबकर अकड़ा-अकड़ा फिरता है । न ठौर, न ठिकाना, आवारागर्द कहीं का ! जाओ, अपना

रास्ता नापो, नहीं तो...

रघुराज : बड़ा घमंड दिखाता है ! अगर तेरी हड्डियां न चटका दीं तो मेरा नाम...

हीरा : अबे कौन डरता है तेरे जैसों से । तीनसौ पैंसठ मिलते हैं गांव-गांव में । ले, करले मेरा जो कुछ करना है । (ऊंचे स्वर में एक ओर देखकर) अरे मनसुखा, लाना, जरा मेरी लाठी ।

[लोगों की उठती हुई आवाजें, आदमियों के इकट्ठे होने का शोर, भीतर से किशन का अपने चबूतरे पर आना]

किशन : क्या हुआ, हीरा काका ? क्या बात है, सबके सामने कहो । डरते क्यों हो ?

हीरा : कुछ नहीं, भैया । तुम सब लोग एक तरफ को हट जाओ और मेरी लाठी मुझे दे दो । मैं इस पहलवान रघुराजसिंह को देख लूं । मंगलसिंह, याद रखना, तुमने आज ईमानदारी का साथ नहीं दिया तो अपने किये पर किसी दिन खुद पछताओगे ।

मंगल : तुम जो करना चाहो, कर लो, हीरा पंडित । दिल में कोई अरमान न रह जाय । बुला लो, अपने हिमायतियों को ।

किशन : इसमें तो हिमायती का कुछ नहीं है, भैया । तुम्हें मेरा आना बुरा लगा हो तो मैं चला जाता हूं । पर रघुराजसिंह, तुम्हें बताये देता हूं कि हीरा पंडित की ओर आंख उठाई तो तुम्हारी खैर नहीं है । सब पहलवानी निकाल-

कर रख दूंगा । क्या बताऊं किन-किन कारणों से तुम्हारा इतना लिहाज किया है । तुम गांव के नाम पर बट्टा लगाते हो । तुम्हारा यहां रहना गांव के हित में नहीं है ।

रघुराज : बात तो ऐसे अकड़कर कर रहे हो, जैसे गांव के मालिक तुम्हीं हो ।

किशन : मैं जो कुछ हूं सो मैं जानता हूं, पर तुम्हें बता दूं कि गांववाले तुम्हें अच्छा आदमी नहीं समझते ।

हीरा : तुम जाओ, भैया, अपना काम करो । तुम्हें और भी बहुत से काम हैं । ऐसे लोगों से निपटने के लिए मैं ही बहुत हूं । इससे और इसके हिमायतियों से हम अच्छी तरह-से निपट लेंगे, तुम ज़रा गोपाल को भेजते जाना । बस । (किशन जाता है)

मंगल : चलो, रघुराजसिंह, चलो । अपनी बैठक में चलकर बैठें । । लड़ाई-भगड़े से क्या फायदा !

रघुराज : अच्छा, चलो । पंडितजी, ज़रा सावधान रहना । तुम्हारी फिर किसी दिन खबर लूंगा ।

हीरा : अवे जा, धमकाता किसे है ! तेरे जैसे पचासों छोकरे पढ़ाकर छोड़ दिये । जब जी आवे तब आ जाना । ऐसे समझते हैं, जैसे पंडित हीरामन ने तो हाथों में चूड़ियां पहन रक्खी हैं । जाओ, ओ छोकरो, अपना काम करो । (सब जाते हैं, मंगल और रघुराज बैठक के चबूतरे पर आकर बैठ जाते हैं ।)

मंगल : आजकल गांववाले तुम्हारे विरुद्ध कुछ ज्यादा हो गये

हैं, रघुराजसिंह ।

रघुराज : देख तो मैं भी यही रहा हूँ

मंगल : अच्छा इसीमें है कि तुम शहर चले जाओ, कुछ दिनों के लिए और अपना लकड़ी का काम शुरू करो । जितना भी रुपया मेरे पास है, मैं उस काम में लगा दूंगा ।

रघुराज : दीखता तो यही कुछ है । अब कुछ दिनों के लिए यहां से जाना ही पड़ेगा । अच्छा, तुम जो कहते हो, ठीक है ।

मंगल : तो फिर कल ही शहर चले चलते हैं ।

तीसरा दृश्य

[स्थान : वही । मंगल चबूतरे पर बैठा बहियां देख रहा है । राधा का प्रवेश]

राधा : कुल बीस दिन रह गये हैं अब लड़की के ब्याह में । न तो कुछ कपड़े-लत्ते खरीदे हैं और न कोई गहना ही बनवाया है । आखिर यह सब कब बनेगा ।

मंगल : अरी, तो क्या बीस दिन कम होते हैं !

राधा : कम तो नहीं होते, पर पैसा भी तो लौट रहा हो । अच्छा-भला घर में पड़ा था रुपया, निकालकर उस निगोड़े को दे दिया । मैं कहती ही रही, पर मेरी कौन सुनता है ! मैं तो जैसे इस घर में कुछ हूँ ही नहीं !

मंगल : कौन-सा तेरा रुपया मारा जा रहा है वहां ! जब दूना

होकर आयगा तब पता लगेगा ।

राधा : आ लिया दूना होकर । मुझे तो यह भी लौटता नहीं दीखता, तुम दूने की बात कहते हो ।

मंगल : क्यों ? कहां चला जायगा ? कल ही जाकर ले आऊंगा उससे ।

राधा : महीनेभर से यही कल-कल सुनती आ रही हूं । राम जाने वह तुम्हारी कल कब आयेगी । तुम मांगने जाते होगे, 'भैया-भैया' कहकर वह कोई बहाना बना देता होगा । तुम लौट आते होगे । तुम्हारे पैसे से यह छिद्दा-विद्दा सभी शहर में जाकर रघुराजसिंह के पास मजे उड़ा रहे हैं । सुनती हूं, रोज़ शराब पीते हैं, जुआ खेलते हैं और भी जो बुरे ऐब हैं, सब करते हैं ।

मंगल : तुझे घरबैठे इन सब बातों का पता चल जाता है ! हम तो कुछ जानते नहीं !

राधा : जानते भी होगे तो जान-बूझकर आंखें मूंदे रहते होगे । मुझे तो कुछ-कुछ तुमपर भी सन्देह है ।

मंगल : (गुस्से से) रधिया, होश से बातें कर । केंची की तरह जीभ चलाना ठीक नहीं ।

राधा : जिसके घर में लड़की ब्याहने को बैठी हो, उससे ऐसे समय होश की बातों की आशा नहीं करनी चाहिए । दूसरे लोग पांच-छः महीने पहले से ही सारा सामान जुटा लेते हैं, और यहां रह गये हैं गिनती के बीस दिन । तुमने तो अपनी घोलकर पी ली है ! जाओ, अभी जाओ

और शहर जाकर उससे रुपये लेकर आओ, नहीं तो मैं सिर पटक-पटककर जान दे दूंगी। लड़की का ब्याह करना है, हँसी-खेल नहीं है। मैं तुम्हें अब भी कहती हूँ कि मुझे तो उसकी नीयत पर सन्देह है।

मंगल : लगता है, रघुराजसिंह के विरुद्ध किशन और हीरा पंडित ने तुम्हें खूब भरा है। एक दिन तुम्हें अपने-आप पता लग जायगा कि कौन बुरा है, कौन भला।

राधा : हां-हां, देख लेना, एक दिन तुम न पछताये तो मुझसे कहना। तुम्हें तो आदमी परखना भी नहीं आता।

मंगल : अच्छा बाबा, मुझे नहीं, तुम्हें तो आता है। जब कोई ऐसी-वैसी बात होगी तब कहना, अभी से मेरा सिर क्यों खाये जा रही है।

[नैपथ्य में घोड़े की टाप। घोड़ा आकर रुकता है। तभी रंगमंच पर घबराये हुए रामू का प्रवेश]

रामू : बापू, ओ बापू, गजब हो गया, गजब हो गया, बापू।

मंगल : क्या हुआ ?

रामू : हमारे शहरवाले लकड़ी के कारखाने में आग लग गई।

मंगल : हैं, क्या कहा !

राधा : हाय राम, हम लुट गये !

मंगल : कुछ बचा या...

रामू : कुछ नहीं, बापू। सबकुछ जलकर राख हो गया।

मंगल : रघुराजसिंह कहां है ?

रामू : वहीं हैं, शहर में, पर कल वह कारखाने में नहीं सोये

थे । मेरे पास दुकान पर आ गये थे । जब कारखाने में आग लगी तो बड़ा शोर मचा, मैंने उन्हें बहुत जगाया, पर वह उठे नहीं । रात उन्होंने बहुत शराब पी रखी थी । लोग कहते हैं, यह आग उन्होंने ही लगवाई है । दो रातों से वह लगातार कारखाने से तैयार माल निकालकर बाहर भेजते रहे । पता नहीं, वह माल कहां भेजा है उन्होंने ? जब वह उठे तो पूछने पर बोले— जलकर सबकुछ खाक होगया । कुछ भी नहीं था उसके बाहर । उन्हें आग लगने का मलाल नहीं मालूम होता, बल्कि वे अपनी चीजों का रोना लेकर बैठे हुए हैं । कहते हैं, रुपये-पैसे भी वहीं एक लकड़ी की अलमारी में रखे हुए थे ।

राधा : हाय राम ! हमारा सबकुछ लुट गया । मैं तो पहले ही कहती थी कि ऐसे कमीनों के साथ मिलकर काम मत करो । एक दिन तुम्हें जरूर धोखा दे जायेंगे । पर यहां मेरी कौन सुनता है ।

मंगल : अरी, चुप भी रह । मैं शहर जाकर देखता हूं, आखिर मामला क्या है । इस तरह आंसू बहाने से तो कुछ नहीं होने का ।

राधा : हे भगवान, अब क्या होगा !

रामू : बापू, उनकी बातों से साफ मक्कारी टपकती थी । छिद्दा वगैरा सबेरे आये । कहने लगे, बुरा हुआ । मुझे देखकर साथ-साथ मुस्कराते भी जाते थे । आपस में एक-दूसरे से मजाक कर रहे थे । मेरा जी जला जा रहा था, उनकी

बातें सुन-सुनकर । उनकी बातों से पता चल रहा था की वे सब जल्दी ही इस शहर को छोड़ देंगे ।

राधा : मैं तो सबकुछ पहले से ही जानती थी ।

मंगल : रामू, घोड़ों को पानी-वानी पिला ले । चल, शहर चल-कर देखें, आखिर बात क्या है । राधा, तुम बेकार का शोर न मचाना । सारे गांव में इस कहानी को फैलाने की कोई जरूरत नहीं है ।

राधा : बात तो ऐसे करते हो, जैसे गांववालों से यह बात छिपी ही रहेगी । (दोनों जाते हैं)

चौथा दृश्य

[स्थान : वही । किशन अपनी चौपाल पर बैठा है ।]

हीरा : किशन भैया ! आखिर वही हुआ, जिसकी तुम्हें उम्मीद थी ।

किशन : राम-राम, पण्डितजी ! (ऊंचे स्वर में) चन्दो, हीरा पण्डित आये हैं । जरा कुछ खाने को हो तो ले आओ । पानी भी लाना । मैं भी प्यासा हूं । हां, अब कहो, आखिर बात क्या है ?

हीरा : मंगलसिंहवाले लकड़ी के कारखाने में आग लग गई ।

किशन : हैं !, कैसे ? अपने-आप ?

हीरा : मैं आज शहर गया हुआ था । वहीं वहां मिल गये । सुबह ही गये थे । मारी छानबीन के बाद मालूम हुआ है कि रघुराजसिंह ने यह आग अपने आदमियों से लगवाई है

और वे सब यह शहर भी छोड़ गये । रामू इधर कहने आया, उधर वे सब रफूचक्कर हो गये ।

किशन : मंगल कहां है ? चन्दो, इधर आना, ज़रा जल्दी ।

हीरा : पुलिस में रिपोर्ट दर्ज कराके गांव आ गये हैं । बेचारे बड़े परेशान थे । इधर सिर पर बेंटी का ब्याह है, उधर नई आफत आ गई । मुझसे बातें करते आये सारे रास्ते । बोले, भैया, कल समधी के यहां जाऊंगा । लड़की के ब्याह से इंकार कर दूंगा । इसके सिवाय और कोई चारा ही नहीं दीखता । जो कुछ था सबकुछ इसीमें लगा दिया था । (चंदो आती है)

चंदो : क्यों ? क्या कहते हो ?

किशन : सुनती है, मंगल के साथ कैसी बुरी बीती है !

चंदो : मैं सबकुछ जानती हूं । मुझे सबकुछ बता दिया था, भाभी ने । मैं अभी कुछ देर पहले वहीं से आ रही हूं ।

किशन : पर हीरा पंडित तो और भी बुरी बात कह रहे हैं । वह सीता का ब्याह हटा रहे हैं ।

चंदो : इसके अलावा और चारा ही क्या है । अब तुम्हीं बताओ, करें तो बेचारे क्या करें ! उन्होंने तो शादी के नाम पर कुछ भी नहीं बनवाया । अब शादी के दिन ही कितने रह गये हैं । वह कल ही लड़केवालों के यहां जा रहे हैं । कोशिश करेंगे, ब्याह दो साल पीछे हट जाय । नहीं हटा तो फिर मना कर आयेंगे । भाभी आज सारा दिन रोती रही हैं । उनकी आंखें सूज गई हैं । मैंने बहुत दिलासा

दिलाया, पर ज़बानी जमा-खर्च से कहीं धीरज बंधता है !

किशन : कुछ भी हो, भाई ! अब आपसे की लड़ाई नहीं चल सकती । खान्दान का सवाल है, फिर गांव की बात है ! मैं चौधरी से इस बारे में बात करूंगा । रघुराज के पीछे वह सबके दुश्मन बने हुए थे । उस दिन हीरा पंडित से वह रघुराज की ओर से न बोलते तो रघुराज की मस्ती वहीं भाड़ दी जाती और वह इस आफत में पड़ने से भी बच जाते ।

चंदो : भाभी कहती थीं कि मुझे रुपये जाने का तो कोई मलाल नहीं है । अच्छा हुआ, इन्हें किसी तरह सबक तो मिला, पर लड़की का व्याह मिर पर है, इसकी चिन्ता है ।

हीरा : मंगलसिंह ने भी इन लोगों के पीछे हरेक से दुश्मनी मोल ले रखी थी । उस दिन भगड़ा रघुराज से था, बीच में वह पड़ गये ।

किशन : कुछ भी हो पंडित, पुराने भगड़ों को कुएं में डालो । इस वक्त की बात करो । गांव के एक आदमी पर आफत आ जाय तो गांववालों का क्या फर्ज हो जाता है । वही हमें करना है ।

हीरा : तुम ठीक कहते हो, भैया । मैं तो सारे रास्ते बड़े प्यार से उनसे बात करता आया । उनसे मेरी कोई दुश्मनी थोड़े ही है । तुम जो कहोगे, मैं करने को तैयार हूं । जिस तरह की भी सहायता वह चाहें, मैं दूंगा । पर सवाल यह है कि वह गांववालों की मदद लेंगे ?

किशन : उन्हें इन्कार करने का क्या हक है ? बेटियां किसी एक की नहीं, सबकी होती हैं । फिर, हीरा पंडित, तुम्हारी दया से इतना पैसा तो है ही कि सीता का ब्याह कर सकूँ ।

चन्दो : न हो तो तुम उनसे मिल ही देखो ।

किशन : कहती तो ठीक हो । अच्छा, अभी जाता हूँ । आओ, पंडित ।

[मंगलसिंह के घर के दरवाजे को जाकर खटखटाते हैं,
मंगलसिंह बाहर आता है]

मंगल : कौन, किशनसिंह ?

किशन : एक गांववाले की हैसियत से आया हूँ । दो मिनट बात करनी है ।

मंगल : आओ, बैठो । अरी रधिया, रामू से कहना, जरा हुक्का ताजा करके दे जाय, किशनसिंह आया है । कहो, कैसे आना हुआ ? हमारे साथ जो बीती है, वह तो तुमने सुनी ही होगी ?

किशन : वही सब सुनकर तो आया हूँ । जो हो गया, उसपर आंसू बहाने से काम नहीं चलेगा । सुना है, तुम सीता के ब्याह के लिए समधियों से मना करने जा रहे हो !

मंगल : हां, जा तो रहा हूँ ।

किशन : यह नहीं हो सकता । मेरे होते हुए लड़की की शादी नहीं रुकेगी ।

मंगल : यह कैसे हो सकता है ! क्या मैं अपनी जग-हँसाई

करवाऊं ? मेरी तुम्हारी आजतक दुश्मनी रही और अब एकदम आफ़त पड़ने पर मैं तुम्हारे आगे भुक जाऊं !

किशन : इसमें भुकने की कोई बात नहीं । आप मुझसे जिंदगी-भर मत बोलिये । और भी जो सज़ा देनी हो दे लीजिये, पर मुझपर ऐसा अत्याचार मत कीजिये, जो मुझसे सहा न जाय । बच्चे सबके एक-से हैं ।

[इतने में रामू हुक्का भरकर लाता है]

रामू : राम-राम, काका ।

किशन : जियो भैया । जा रामू, तू अपना काम कर । (रामू जाता है) मुसीबत के वक्त अगर आदमी आदमी का साथ न दे तो कब देगा ! फिर सीधी बात है, भैया, सह-योग के बिना जिन्दगी चल कैसे सकती है ! आज मैं आपको आपके काम में मदद दे रहा हूँ, कल आप किसी और को देंगे ।

मंगल : बात यह है कि मैं कर्ज लेने के हक में नहीं हूँ ।

किशन : राम-राम ! मैं और तुम्हें कर्ज दूंगा ! और सो भी बेटी के ब्याह के लिए ! मैं सीता का ब्याह करूंगा, अपने-आप । तुम न जाओ, मैं जाऊंगा समधियों के यहां । वे दोनों भाई मेरे साथ पढ़े हैं, कुछ तो गये का लिहाज करेंगे !

मंगल : तुम उनसे क्या कहोगे ?

किशन : कहूंगा कि बरात जितनी कम ला सकें, अच्छा है । जिन्दगी सारी पड़ी है, लड़की को देखे के लिए ।

मंगल : अरी रधिया, सुनती हो किशन क्या कहता है ?

राधा : मैं सब सुन रही हूं । देवरजी ठीक कहते हैं ।

मंगल : तुम जो करना चाहो, तुम्हारी इच्छा । थोड़ी देर पहले नम्बरदार आये थे । हीरा पंडित आये थे । वह भी कहते थे कि सीता की शादी तो होगी ही । किशन भैया, तुम सबके सामने मैं एक अपराधी मालूम होता हूं ।

किशन : क्यों लज्जित करते हो, भैया । अच्छा, मैं अभी गाड़ी जोड़कर लाता हूं । तुम दोनों नाश्ता करके तैयार हो जाओ । मैं चन्दो को भी लेता आऊंगा । आज ही शहर चलकर कुछ कपड़ा-लत्ता खरीद लावेंगे ।

मंगल : जैसी तुम्हारी मर्जी । (राधा बाहर रंगमंच पर आती है)

राधा : इसे कहते हैं भाई । दिल में कसक उठी तो आया भागा-भागा । और इसे कहते हैं सहयोग । गांव के मुखिया दो-दो बार हो गये । मैं समझती हूं, तुम्हारी लड़की का व्याह बहुत अच्छे ढंग से होगा ।

किशन : तुमने भी तो लक्ष्मी के व्याह में भैया से छिपाकर लक्ष्मी को बहुत-कुछ दिया था, भाभी ।

राधा : क्या दिया था ! वह तो कुछ भी नहीं था, लाला !

किशन : समय पर इतनी ही मदद काफी होती है, भाभी । सहयोग के बल पर ही दुनिया चलती है । अच्छा, अब शहर चलने की तयारी करो । मैं अभी आया । (जाता है)

: ६ :

हमारा कर्त्तव्य

पात्र

हरनामसिंह	: एक समृद्ध किसान
कालू (कल्याणसिंह)	: हरनामसिंह का पुत्र
रामो	: हरनामसिंह की पत्नी
रूपसिंह	} अन्य किसान
नाहरसिंह	
विजयपालसिंह	
भोपालसिंह	

पहला दृश्य

[हरनामसिंह और उसका पुत्र कल्याणसिंह (कालू) अपने खेतों की मेड़ बना रहे हैं। नपथ्य से रहट चलने की आवाज आ रही है]

कालू : (पसीना पोंछते हुए) काका, अब तो बस करो। शरीर पसीने से तरबतर हो गया है। देखते नहीं हो, धूप कितनी चढ़ आई है।

हरनामसिंह : अरे, धूप से भी कहीं डरते हैं ! यह धूप तो कुछ भी नहीं है, बेटा। हमने भयंकर लू-भरी दोपहरियों में काम किया है। पसीने की जगह शरीर से तेल निकलने

लगता था । न जाने आजकल के छोकरो को क्या हो गया है ! दस फावड़े मारे नहीं कि हांफने लगे । कहने लगते हैं, मेरा जिस्म टूट गया । मेरे हाथ थक गये । हमने अपने बाप-दादा की कहानियां सुनी हैं । सोचता हूं कि वे कैसे जवान होंगे, जिन्होंने इस बंजर भूमि को हरियाली से लाद दिया था ! फावड़ा मारते थे तो धरती कांपती थी ! हमारा ही जमाना ले लो, सुबह से शाम तक काम करते रहते, थकावट नहीं व्यापती, और जिस दिन काम न करो, ऐसे लगता है, जैसे शरीर टूटता हो ।

कालू : पर काका, अपने तो अंजर-पंजर ढीले हो गये हैं । अपने ब्रम का तो यह काम है नहीं । मैं तो सोचता हूं, काका, शहर में जाकर कोई नौकरी कर लूं ।

हरनाम : (क्रोध) क्या कहता है रे ! शरम नहीं आई तुझे यह सब कहते हुए ! जिस दिन किसान का बेटा नौकरी करेगा, धरती सूख न जायगी उस जिन ! हल कौन चलायेगा ? अन्न कौन पैदा करेगा ? दुनिया खायेंगी कहां से ?

कालू : तुम्हारी बातें भी बड़ी अजीब होती हैं, काका । देखते हो, छिद्दू कहार के लड़के शहर गये थे । कल ही लौटे हैं दो-तीन साल के बाद । चाय का काम करते थे, इतना सारा पैसा कमा के लाये हैं !

हरनाम : तुझे कहते हुए लाज नहीं आई रे, कालू । कहां कहार के लड़के और कहां तू किसान का लड़का ! पैसा ही

तो जिन्दगी में सबकुछ नहीं है। धरती की गोद में पलने-वाला दूसरों के जूठे टुकड़ों पर पले ! धरती की सेवा कर, देख धरती तुझे कितना पैसा देती है, सोने की तरह अन्न उगलती है कि नहीं। पूरी ताकत से हल चला। खेतों को पानी दे, इनके चारों ओर मेड़ बना, देख खेत सोना उगलते हैं कि नहीं। मेहनत के बिना तो दुनिया में कुछ भी नहीं होता, बेटा। मुझे पता होता कि तू इतना काम-चोर हो जायगा तो तुझे तेरे मामू के यहा कभी भी न भेजता।

कालू : काम तो कर रहा हूं, काका। आप यह तो नहीं कह सकते कि मैं कामचोर हूं। अपनी-अपनी बात है। मामू काम ही नहीं करने देते थे। वह कहते थे, कुछ पढ़ ले, बेटा, जिन्दगी में काम आयेगा ! वहां मामू की आज्ञा सिर माथे, यहां आपकी। वहां मामू का राज था, यहां आपका। हमें तो जो कहोगे वही करेंगे। मामू सोचते थे कि छोरा पढ़-लिखकर होशियार हो जाय।

हरनाम : वह तो ठीक है, बेटा। आज की दुनिया में पढ़ाई-लिखाई की किसान को बड़ी जरूरत है; पर पढ़ाई-लिखाई यह तो नहीं कहती कि आदमी अपने घर का काम-काज भी छोड़ दे। अब देख, तूने जितनी देर में इतनी मेड़ बनाई है, मैंने उससे चौगुनी बना ली है।

कालू : अभ्यास की बात भी तो होती है, काका। कुछ ही दिनों में देखना, तुम्हारे बराबर काम करता हूं कि नहीं।

हरनाम : (खुश होकर) अरे, सो तो मैं जानता हूँ कि आखिर तू बेटा किसका है ! पचास बरस का हो गया हूँ तो क्या, किसी अच्छे-भले जवान के चांटा जमा दूँ तो वहीं ढेर हो जाय ! (थपकी देकर) अच्छा चल, थोड़ा-सा काम और कर लें । तेरी मां रोटी लाती होगी, फिर बैठकर खायेंगे । यह एक मेड़ तबतक पूरी हो जायगी ।

कालू : खेतों के आस-पास यह मेड़ और बांध बनाने का फायदा क्या है, काका ?

हरनाम : अरे, वाह ! तू किमान होकर इतना भी नहीं जानता ! बेटे, खेतों के आसपास मेड़ बनाने से उनकी बड़ी रक्षा होती है । अब आगे बरसात आ रही है । बारिश का जो पानी इन खेतों में से होकर गुजर जाता है वह खादवाली ऊपर की बटिया मिट्टी को बहाकर ले जाता है । खेत को बेडौल कर देता है । खेत के आस-पास यह चौकोर बांध बनने से अब ऐसा नहीं हो सकेगा । वह पानी यहीं रुक जायगा और जमीन को तर रखेगा । फसल अच्छी होगी । हरेक खेत के आस-पास मेड़ होने से किसी भी खेत की खाद दूसरे खेत में नहीं जायगी । धारा के रूप में पानी के न बहने से खेतों की समतल धरती में गड्ढे भी नहीं पड़ेंगे । यह जो पास का बरसाती नाला है न, बिल्कुल सूखा-सा...

कालू : वही जो हरीसिंह के खेतों में से होकर बहता है ।

हरनाम : हां वही, वहां की सारी धरती पहले उपजाऊ थी ।

खेतों में मेड़ न होने से हर बरसात में पानी नाले का रूप धारण करके बहता रहा ।

कालू : पर काका, अब उसके आस-पास मेड़ बनाकर उस धरती को खेतों में शामिल क्यों नहीं कर लिया जाता ?

हरनाम : अरे, नहीं बेटे, उसके ऊपर की सारी बड़िया मिट्टी बह गई है । अब उसमें रेतीली मिट्टी आ रही है और फिर बहुत बड़े-बड़े गढ़े भी पड़ गये हैं । चौदह-पन्द्रह साल से तो मैं ही उसे देख रहा हूँ । दूसरे, मौसम में कुछ बो भी दिया तो वह ज्यादा फलता-फूलता नहीं है ।

कालू : तब तो, काका, बरसात से पहले-पहल हमें अपने सभी खेतों के बांध ठीक करने होंगे ।

हरनाम : हां रे, और इसके साथ-ही-साथ घर और चौपाल के छप्पर भी बनाने हैं, बेटा ! मैं सोच रहा हूँ कि तेरे लिए एक बड़िया-सी चौपाल बनवा दूँ । वहाँ बैठे-बैठे अपनी पढ़ाई करते रहना ।

कालू : तब तो बहुत काम करने को पड़ा है, काका !

हरनाम : हां, पर ऐसी घबराने की कोई बात नहीं है ! इसी खेत की नये सिरे से मेड़ बनानी है । बाकी की तो बस कुछ मरम्मत ही करनी है ।

कालू : पछाहवाले खेत का भी तो बुरा हाल है, काका । आप ही तो कल मां से कह रहे थे ।

हरनाम : हां, पर क्या हुआ, वह खेत भी तीन-चार दिन की मार है, फिर सब हल्के-हल्के काम हैं । निराई करता

और पानी देना ही तो बाकी रह जायगा ।

कालू : काका, रहट चलाने का काम मैं अपने जिम्मे लूंगा ।

मामा के यहां भी मैं पढ़कर आता था तो अपनी किताब लेकर रहट की गद्दी पर बैठा-बैठा पढ़ता रहता था ।

हरनाम : हां-हां, ठीक है, बहुत अच्छी बात है, एक पंथ दो काज ।

कालू : एक बात कहूं, काका । बहुत दिनों से कहना चाह रहा था, पर कुछ भिन्नक-सा रहा था ।

हरनाम : (हँसकर) हां-हां, कह । मुझसे नहीं कहेगा तो और किससे कहेगा । तेरे दुःख-सुख का साझीदार मैं और मेरे सुख-दुःख का साझीदार तू ।

कालू : मुझे एक अखबार मंगवा दो, काका । घर बैठा-बैठा दुनियाभर के समाचार वांचता रहूंगा । मामा के यहां रोज पढ़ने से आदत-सी बन गई है ।

हरनाम : हां-हां, पर इसमें भिन्नकने की क्या बात थी, रे ! मैं तो खुद ही पहले से यह सोच रहा था, पर सोचा कि हम इतने पढ़े-लिखे नहीं हैं । दुनिया में हो रही बड़ी-बड़ी बातों को क्या समझेंगे ! पर अब तो तू सबकुछ समझा दिया करेगा । (सोचकर) क्यों रे कालू, क्या मैं इस उमर में भी और पढ़ सकता हूं ।

कालू : क्यों नहीं, काका । आप जैसे मेहनती आदमी के लिए दुनिया में कौन-सी बात मुश्किल है ।

हरनाम : तो ठीक है, हम भी कुछ और पढ़ेंगे । (एक ओर

देखकर) लो, वह तेरी मां आ रही है। बातों-ही-
बातों में हमने कितना काम कर लिया है।

कालू : हां, तो काका। हम मेहनत करें तो हमारी धरती
सोना उगल सकती है ?

हरनाम : हां बेटा, बड़े-बूढ़ों का कहना है कि मेहनत करने से
बालू से भी तेल निकल सकता है।

[एक ओर से रामो और दूसरी ओर से रूपसिंह आता है]

हरनाम : मुनाओ, रूपसिंह ! क्या हाल-चाल हैं ?

रूपसिंह : सब आपकी दुआ है, काका। कितनी बना ली मेड़ ?
कल्याणसिंह को भी लगा लिया साथ।

हरनाम : और क्या भैया, किसान का बेटा है, खेती का काम
नहीं सीखेगा तो कैसे काम चलेगा !

रूपसिंह : मो तो है ही, पर अभी इसे और पढ़ाते तो ठीक
रहता।

हरनाम : मोच तो मैं भी रहा हूँ, भैया। आगे रामजी की
मर्जी। क्यों रामो, तेरा क्या विचार है ?

रामो : मैं क्या कहूँ, अपने आगे तुम किसीकी मुनते थोड़े ही
हो। चादर देखकर पांव फैलाओ। और क्या करेगा पढ़-
लिखकर।

हरनाम : पढ़ा-लिखा किसान बनेगा, नये-नये ढंग से खेती
करेगा। आज की दुनिया में हर काम के लिए पढ़े-लिखे
आदमी की जरूरत है।

रामो : (ध्वांग से) तो खुद भी किसी स्कूल में दाखिल हो

जाओ न ?

हरनाम : हां-हां, सो तो करूंगा ही । कालू से अभी यही बातें कर रहा था, कुछ देर पहले । पंचायत ने बच्चों के लिए तो स्कूल खोला ही है । अब एक रात की पाठशाला बूढ़ों के लिए भी खोल दे । जो-जो फुरसत पायेगा और जिसकी तबीयत होगी, पढ़ आयेगा वहां जाकर ।

रूपसिंह : यह तो बड़ा उत्तम विचार है, काका । मैं भी कुछ पढ़ने की सोचता हूं ।

रामो : हां, तुम और तुम्हारे काका यही तो दो अच्छे विचार-वाले हैं न इस गांव में ।

हरनाम : अरे भई, गुस्सा क्यों होती हो । तुम भी पढ़ लिया करना । तुम्हारे लिए भी पाठशाला खुलवा देंगे (तीनों हँसते हैं) ।

रामो : तो मैं बूढ़ी अब पढ़ने बैठूंगी ?

हरनाम : कौन कहता है कि तू बूढ़ी होगई है । (तीनों हँसते हैं)

रामो : शरम तो नहीं आती । सुनो, मेरी बात मानो तो एक बात कहूं ।

हरनाम : आज तक मैंने तुम्हारी कौन-सी बात नहीं मानी, भला बताओ तो सही ।

रामो : (धीमी आवाज़ में) हाय राम, कैसी बातें करते हो छोरों के सामने (ऊंचे स्वर में) मैं कहूं, इसका ब्याह कर डालो, कालू का । कल ही मुझे तम्बरदार की बहू कह

रही थी उसकी भानजी ब्याह के लायक होगई है । सुना है, बड़ी खूबसूरत है वह छोरी ।

हरनाम : रहने दे, रहने दे । औरतों के पास इसके सिवाय और कोई बात होती ही नहीं । फलाने का लड़का ब्याहने जोग, फलाने की लड़की जवान !

रामो : ब्याह न करोगे तो मारी उमर इसे कुवारा ही बिठाये रखोगे । घर में बहू आयेंगी तो मैं भी कुछ चैन की सांस लूंगी ।

हरनाम : “चैन की सांस” तो ऐसे कह रही हो, जैसे जिन्दगी-भर फावड़ा चलानी आई हो ।

रामो : कहते हुए लाज भी नहीं आती । पच्चीस साल होने आये तुम्हारे साथ ब्याह हुए । खुद ही सोचो, कभी हाथ-पर-हाथ रखकर बैठे देखा । सुबह से शाम तक मशीन की तरह काम करती हूँ । पांच सेर अनाज पीसा है, सबरे ही । पीसो तो जानूँ । हाथों में छाले न पड़ जायं तो मुझे कहना ! बड़ी फावड़े की हेकड़ी दिखाते हैं ।

रूपसिंह : काकी, असल में काका समझते नहीं कि औरतों को कितनी मेहनत करनी पड़ती है, अपने काम में ।

कालू : (रोटी खाते हुए) अरी अम्मा, क्या आज कहीं से मिर्चें उधार लाकर डाली हैं, दाल में ।

हरनाम : अरे, नहीं रे, इतनी बात भी नहीं समझता । तेरी मां ने सोचा होगा, रोटी रहट के पास बैठ के खायेंगे । मिर्चें लगेंगी तो पानी पीते जायेंगे । जब पानी का इतना

इन्तज़ाम है तो मिर्चें क्या कर लेंगी ।

रामो : तुम्हारी तो आदत है, हर बात की हँसी उड़ाना । क्या हुआ, जो बच्ची से मिर्चें कुछ ज्यादा पड़ गई । (लोटे से पानी देती है) अरे हां, एक बात मैं कहना भूल गई थी । तुम्हें पता है न, विजयपालसिंह की चौपाल में आज रात को पंचायत हो रही है ।

रूपसिंह : काका को न पता होगा तो और किसे होगा । काका खुद भी तो पंचों में हैं । वैसे ज्यादाती तो भोपालसिंह की है, काका । बिना बारी के नहर का पानी काटकर अपने खेत में दे दिया ।

हरनाम : भैया ! जब लोग जानते हुए भी ऐसा करते हैं तो क्या किया जाय ?

रूपसिंह : किया क्या जाय ! भरी पंचायत में पहले तो मारो सौ जूते और फिर पिलाओ हुक्के का पानी ! तब देखो, अकल ठिकाने आती है कि नहीं ।

हरनाम : इससे कुछ भी नहीं होने का, रूपा । जबतक हम लोग अपना-अपना कर्त्तव्य नहीं पहचानेंगे तबतक हमारा उद्धार होना मुश्किल है । पंच की बात मानना तो अलग, लोग समझते हैं कि बूढ़ा सठिया गया है ।

रूपसिंह : राम-राम, कैसी बात करते हो, काका । किसमें इतनी ताब है कि पंचपरमेश्वर की बात टाल सके !

हरनाम : मैं तो समझता हूँ कि सबको मिलकर सामूहिक रूप से खेती करनी चाहिए, फिर देखेंगे, कौन कितने पानी में

है। तू शाम को तो होगा ही वहां पंचायत में। इस सवाल को ज़रा उठाना।

रूपसिंह : पर मैं तो वहां उस समय नहीं होऊंगा।

हरनाम : क्यों, कौन-सा ऐसा काम आ पड़ा है तुम्हें ? जब सारा गांव वहां होगा तो तू घर बैठा क्या करेगा ?

रूपसिंह : नहीं काका, मैं वहां कभी नहीं जाने का। मेरी और विजयपालसिंह की बड़ी पुरानी दुश्मनी है। मैं कभी भी उसकी चौपाल पर पैर नहीं रखने का।

रामो : ठीक तो कह रहा है रूपा। पर इन्हें तो अपनी इज्जत का रत्तीभर भी ध्यान नहीं है। वही विजयपालसिंह है न, जिससे दो माल पहले तुम्हारी लाठियां चल चुकी हैं। शरम न आयेगी तुम्हें उसकी चौपाल पर जाने ? किस मुंह से जाओगे वहां ?

हरनाम : (मूछों पर ताव देता हुआ) इसी मुंह से जाऊंगा। तुम दोनों के तो दिमाग खराब हो गये हैं। ज़रा-ज़रा-सी बात को खींचने की तुम्हारी आदत है। अभी तक दुश्मनी की बू तुम्हारे दिल में पड़ी सड़ रही है ! मैं तो, भई, जो बात हो, मुंह पर कह लेता हूं और जो उस वक्त होता है, कर लेता हूं। दुश्मनी पालने को मेरे पास समय नहीं है और फिर मैं कौन-सा हरनामसिंह की हैसियत से जा रहा हूं। मैं तो एक पंच हूं और पंच को जहां गांववालों की आज्ञा होगी वहीं पहुंचेगा।

रूपसिंह : पर मैं वहां नहीं आने का, काका ! तुम्हें बताये

देता हूँ ।

हरनाम : (हँसते हैं) हां रे बेटा, तेरे तो फरिश्तों को भी आना पड़ेगा । जब पंचपरमेश्वर गवाही के लिए तुझे बुलायेंगे तो क्या तू नांही कर देगा । भई, अपनी ये दुश्मनियां अब हम लोगों को छोड़नी ही पड़ेंगी । मैं आज पंचायत में इस मसले पर भी बात करूंगा । एक गांव के रहने-वाले आपस में बरसों न बोलें, कितना बुरा लगता है !

रामो : तुम्हारी बातें मेरी समझ में तो कुछ आती नहीं । न जाने क्या ऊट-पटांग बोलते रहते हो ?

हरनाम : तेरा इसमें कोई दोष नहीं है । तेरी अकल ही मोटी है । पर धीरे-धीरे सबकुछ समझ में आ जायगा । हां, देख, शाम की रोटी ज़रा जल्दी बना लेना । अरे रूपा, ज़रा हुक्का ताजा कर ; यार, एक-आध दम मार लें, फिर काम पर लगें ।

रूपसिंह : वहीं रहट पर ही चलो न, काका । वहीं तुम्हें हुक्का पिलायेंगे ।

हरनाम : तो चलो, भाई, पानी भी वहीं का पियेंगे । चलो, कालू, चल रामो ।

[सब जाते हैं]

दूसरा दृश्य

[विजयपालसिंह की चौपाल के बाहर मैदान में पंचायत हो रही है । बहुत-से लोग बैठे हैं ।]

नाहरसिंह : भाइयो, सब अपनी-अपनी जगह पर बैठ जाओ ।

अब पंचायत अपना काम शुरू करती है । हमें बड़े दुःख के साथ कहना पड़ता है कि हमारी दो साल की कोशिशों के बावजूद लोग अपना-अपना कर्तव्य नहीं पहचान सके । हमारी पंचायत को हम सबसे यह आशा थी कि हम अपने गांव को एक आदर्श गांव बनाकर दिखायेंगे । पर हम देखते हैं, लोग जहां थे, वहीं हैं—वही भूठ, वही मक्कारी, वही ठगी और वही फरेब । समझ में नहीं आता कि इन सबसे हमारा छुटकारा कब होगा ? अब भी गांव में ऐसे लोग हैं, जो एक-दूसरे से नहीं बोलते, बल्कि एक-दूसरे की जान के गाहक हैं और इधर हम सारे गांव को एक कुनबा बनाने का सपना देख रहे हैं ।...

हरनाम : (बात काटते हुए) नम्बरदार, मैं भी कुछ कहना चाहता हूं ।

नाहरसिंह : जरूर-जरूर ।

हरनाम : भाइयो, मैं देख रहा हूं कि इस पंचायत में गांव के सभी लोग हाजिर नहीं हैं । कुछके न आने का कारण तो यह है कि भोपालसिंह उनका दोस्त है और पंचायत भोपालसिंह पर जो दण्ड लगायेगी उससे वह सहमत नहीं हो पायेंगे—जैसे कि पदमसिंह । और कुछ इसलिए नहीं आये कि यह पंचायत विजयपालसिंह की चौपाल पर हो रही और उनकी विजयपाल से दुश्मनी है । ऐसों में से हैं रूपसिंह । मैं सरपंच से प्रार्थना करूंगा कि ऐसों को उनके

घरों से बुलवायें ।

नाहरसिंह : मैं चौधरी हरनामसिंह की बात से पूरी तरह सहमत हूँ, पंचायत की यह आज्ञा थी कि सबको यहां उपस्थित होना चाहिए और जिन्होंने इस आज्ञा की अवहेलना की है, उन्होंने खुद में एक बड़ा अपराध किया है । कल्याणसिंह, जाना बेटा, पदमसिंह और रूपसिंह को बुला लाओ । अब भाइयो, तुम अपनी आंखों से ही देख लो, हम लोगों के हृदय एक-दूसरे के लिए कितने उदार हुए हैं । मैं कहता हूँ, पुरानी दुश्मनियां छोड़कर हम लोगों को अपने-आप एक-दूसरे से गले मिल जाना चाहिए ।

विजयपालसिंह : (उठते हुए) पंचो और भाइयो, मुझसे कुछ लोगों ने कल कहा था कि चौधरी हरनामसिंह कल तुम्हारी बैठक पर आने के नहीं हैं, क्योंकि दो साल पहले सभी-को मालूम है कि मुझमें और उनमें कुछ झगड़ा हो गया था, जिसमें लाठियां चलने तक की नौबत आ गई थी । मैं कल ही से सोच रहा था कि पंचायत में एक पंच को भी आने में अड़चन हो तो मुझे अपनी चौपाल पर पंचायत नहीं बुलानी चाहिए । पर हरनामसिंहजी ने अपनी उदारता का परिचय देकर हम सभी लोगों के सामने एक सुन्दर उदाहरण रखा है कि पुराना बैर-भाव भूलकर यहांपर पधारे हैं । मैं और मेरे परिवारवाले उनकी इस नई मित्रता का खुले हृदय से स्वागत करते हैं ।

[लोगों में खुशी की लहर दौड़ जाती है । उत्साह में

‘बहुत सुन्दर’, ‘बहुत सुन्दर’ की आवाजें]

नाहरसिंह : इसे कहते हैं जिन्दादिली ! मैं दोनों से प्रार्थना करूंगा कि भरी सभा में दोनों एक-दूसरे के गले लग जायं । अरे, इलायची और मिसरी निकाल के लाना । भई, हुक्के भी ताजे करके लाना । आज पंचायत का श्री-गणेश बड़े शुभ काम से हुआ है । (दोनों उठकर एक-दूसरे के गले मिलते हैं, ‘पंचायतराज की जय’, ‘पंच-परमेश्वर की जय’) असल में हमें इन दोनों की दुश्मनी बड़ी अखर रही थी ।

कालू : ताऊ, मैं इन्हें ले आया हूं । (रूपसिंह आता है)

नाहरसिंह : लगे हाथ यह भी हो जाय, भैया । रूपसिंह, तुमने अपनी आंखों से सबकुछ देख ही लिया होगा । तो मेरा विचार है कि मिल जाओ विजयपाल की बांहों में बाहें डालकर एक-दूसरे से ।

रूपसिंह : नम्बरदार, मैंने यहां न आकर गलती की । मैं अपनी गलती के लिए भरी पंचायत में क्षमा मांगता हूं । बाप-दादा की दुश्मनी को भुलाकर विजयपालसिंहजी को अपना बड़ा भाई समझूंगा । (गले मिलते हैं)

हरनामसिंह : जुग-जुग जियो, जुग-जुग जियो । अरे, रूपा, तूने तो हम सबको मात कर दिया ।

रूपसिंह : काका, तुम्हारी कही बात मैं सारे दिन सोचता रहा । मुझे लगा कि काका ठीक कहते हैं । एक गांव में रहकर एक-दूसरे से न बोलना कोई अच्छी बात थोड़े

ही है। मैं आ ही रहा था कि इतने में कल्याणसिंह मिल गये।

हरनाम : तभी तो मुझे अचरंज हो रहा था कि इतनी जल्दी कैसे आ गये !

नाहरसिंह : (हुक्के का कश खींचते हुए) हां, तो अब हम लोग असली बात पर आ जायें। (हुक्के का कश) विजयपालसिंहजी ! तमाखू बहुत बढ़िया डाला है चिलम में। मजा आ गया ! कहां से मंगवाया है ?

विजयपालसिंह : घर ही बनाया है। सीरा इत्यादि सब चीजें घर पर ही मंगवा ली थीं।

नाहरसिंह : अरे ओ छोरे, छोड़ दे उस बीड़ी को। किसका है यह छोरा ? मेरे विचार में हमें गांव में इस बात की भी मनाई कर देनी चाहिए कि कोई भी अठारह साल से छोटा तमाखू नहीं पी सकता। यह भी कोई बात है, इन लोगों ने इसे फैशन समझ लिया है। हां, तो भोपालसिंह, तुमपर यह इलजाम है कि तुमने और तुम्हारे भाई ने नहर से निकलते हुए नाले से रात के समय खेतों को पानी दिया, जबकि तुम्हारी बारी के आने में अभी आठ दिन थे। तुम इससे नहीं तो कर नहीं सकते, क्योंकि तुम्हारे खेतों में पानी भरा हुआ था। क्या मैं पूछ सकता हूं कि इस चोरी की क्या जरूरत थी ?

हरनाम : और भाई, इस तरह अन्याय से पानी लेने का मतलब तो यह हुआ कि दूसरे जरूरतमन्द किसान को

उसका जितना हक है, उससे कम पानी मिलेगा। अगर हम लोग अपने स्वार्थ का विचार त्याग दें तो नहरी पानी से हर किसान को खासा लाभ पहुंच सकता है।

नाहरसिंह : ज्यादातर किसानों की यह शिकायत है कि उन्हें नहर से जितना चाहिए, उतना पानी नहीं मिलता। शिकायत ठीक भी है, पर इसमें दोष किसका है ? उन्हीं-का है, जो ऐसा कहते हैं, क्योंकि वह उसे ठीक ढंग से इस्तेमाल नहीं करते। आपस में एक-दूसरे का साथ नहीं देते। मतलब यह कि हम सरकार का भी साथ नहीं देते। कम-से-कम अब हमें इसे राष्ट्रीय कार्य समझकर करना चाहिए। विदेशी सरकार की जगह अब यहां अपनी सरकार है। हमें सरकारी अधिकारियों को कहने का मौका नहीं देना चाहिए। बोलो भाई, तुम चुप क्यों हो ? क्या तुम इस गांव में सबके साथ हिल-मिलकर नहीं रहना चाहते।

भोपालसिंह : नम्बरदारजी, असल में हम अपनी इस करतूत पर बेहद शर्मिन्दा हैं। बात यह है कि हमारे खेतों में पानी ठहरता नहीं है।

हरनाम : इसमें किसी दूसरे का दोष थोड़े ही है, भैया। यह तो अपने आलस के कारण है। पानी ठहरे कैसे ? खेतों के बांध कमजोर पड़ गये होंगे। मूराख हो गये होंगे। उनकी मरम्मत करो तब कहीं यह काम आगे चल सकेगा। आज सुबह छः बजे का लगा हुआ था, कालू को

लेकर बांध बनाने में। इस दुपहरी में खून पसीना एक हो जाता है आदमी का। पर भैया, किसान और नखरा इकट्ठा नहीं चल सकते।

विजयपालसिंह : वाह, क्या बात कही मेरे दोस्त ने। सोच लो कि लगातार कितने ही दिनों की कठिन मेहनत के बाद आज खलिहान से सारा अनाज निकाल सका हूँ। उधर बगिया में कुछ छान-छप्पर डालकर मढ़ैया बनवानी है। तपस्वी-जी की मढ़ैया एक तरह से नये सिरे से बनवानी पड़ेगी।

हरनाम : कब आ रहे हैं, वह महात्माजी ?

विजयपालसिंह : बरसात के दोनों महीने यहीं रहेंगे। तब-तक सबकुछ ठीक करना है, बगिया का। कुछ तख्त भी बनवाने होंगे लोगों के लिए। महाराज का उपदेश सुनने बहुत-से लोग पहुंच जाते हैं, आसपास के गांवों से भी।

नाहरसिंह : अरे भाई, एक तो विद्वान और दूसरे सरल हृदय ! सुना है, गांव की जनता में शिक्षा का प्रचार करने के लिए ही वह साधू हुए हैं। पहुंचे हुए हैं। नाप-तोल्कर बात करते हैं। पिछली बार सारी तुलसी रामायण की कथा कर गये। हां तो, भोपालसिंहजी, अब तुम्हारे पास हमारे प्रश्न का क्या उत्तर है ?

भोपालसिंह : महाराज, मैं क्या कह सकता हूँ। मैं तो अपराधी हूँ। पंचायत जो भी सजा देगी, सर माथे उठाऊंगा। हां, यह कह देता हूँ, मैं सबके बीच में शरमिदा हूँ और आगे के लिए कभी ऐसी गलती नहीं करूंगा। पंचा-

यत माफी देदे तो उसके रहम पर । सजा दे तो उसकी मर्जी ! गरीब आदमी हूँ ।

नाहरसिंह : तुम गरीब हो, यह ठीक है । पर यहां तुम्हें अमीर कौन दीख रहा है ? सभी यहां एक जैसे हैं । एक किसान-परिवार के हैं । अच्छा पंचों, मैं अब आप लोगों की राय चाहता हूँ, भोपालसिंह के बारे में । तुम्हीं कुछ कहो, चौधरी हरनामसिंह ।

हरनाम : भाई, वैसे मेरी राय तो यह है कि जब भोपाल खुद ही अपना अपराध स्वीकार कर रहा है और अपनी करनी पर शर्मिन्दा है तो एक बार हमें भी आगे के लिए उसकी ईमानदारी पर यकीन करना चाहिए और उसे अच्छा आदमी बनने का मौका देना चाहिए ।

[बहुत-सी आवाजें उठती हैं—“ठीक है, ठीक है ।”]

नाहरसिंह : शान्त हो जाओ, भाइयो । हां, तो और पंचों की भी यही राय है । मेरी निजी राय भी यही है । अब भोपालसिंह स्वयं सोचें कि वह किस तरह अपने गांव की शोभा बनकर रह सकते हैं और बनवारीभाई, जिनके कि खेत को पानी ठीक ढंग से नहीं मिल सका, उसका भी इन्तजाम किया जायगा । किसीको और कुछ कहना हो तो कह ले ?

हरनाम : मुझे एक बात पंचायत के आगे रखनी है । मैं समझता हूँ, उसमें गांववालों का ही भला होगा ।

ब्रिजयपालसिंह : ऐसी बात है तो जहांतक होगी, हम लोग उसे

पूरी करने की कोशिश करेंगे ।

हरनाम : सज्जनो, बात यह है कि हमारे बच्चों के लिए स्कूल का प्रबन्ध होगया है । यह हमारी बहुत बड़ी खुश-किस्मती है । मैं सोचता हूं कि यदि कुछ बड़े भी पढ़ने की इच्छा बनायें तो पंचायत को चाहिए कि उनके पढ़ने के लिए रात की पाठशाला खोले और उन पढ़नेवालों में मैं सबसे पहले उपस्थित हूं ।

विजयपालसिंह : हरनामसिंहजी ठीक कहते हैं । मैं भी पढ़ने के लिए तैयार हूं । अक्षरज्ञान तो सभीको हो जाना चाहिए ।

सब : हम सभी तैयार हैं ।

नाहरसिंह : यह तो बहुत ही शुभ लक्षण हैं । पंचायत से जहां-तक होगा, इस मांग को पूरा करेगी । सिर्फ जगह और मास्टरजी की बात ही रही ।

भोपालसिंह : जगह के लिए तो मैं अपनी चौपाल दिये देता हूं । उसके सामने कितना बड़ा चबूतरा है ।

कालू : पढ़ा मैं दिया करूंगा ।

नाहरसिंह : मैं किस मुंह से आप लोगों की तारीफ़ करूं । धन्य हैं आप सब लोग ! यदि हम इसी तरह से अपने-अपने कर्त्तव्य का ध्यान करें और अपनी-अपनी जिम्मेवारी को ईमानदारी से निभायें तो हमारे गांव स्वर्ग से होड़ ले सकते हैं । हम किसान हैं । देश की स्वतंत्रता के साथ-साथ हमारी जिम्मेदारी कितनी बढ़ गई है, इसे आप सब लोग जानते ही हैं ! यह हम लोगों की मेहनत पर

एक कलंक है कि हमारे देश की जनता के लिए दूसरे देशों से अन्न आये ? हमें, जितनी अधिक-से-अधिक मेहनत हो सकती है, करके अधिक अन्न उपजाना चाहिए । हम अन्नदाता हैं । हमें आराम नहीं चाहिए । हमारे होते हुए देश के लोग भूखे रहें, यह वास्तव में दुःख का विषय है ।

रूपसिंह : नम्बरदारजी, आपकी सब बातों पर हम लोग ध्यान देंगे । पर मेरी दो बातें हैं । एक तो यह कि गांव में कुछ अखबार आ जाया करें तो अच्छा है । दूसरी यह कि रात की पाठशाला में कालू न पढ़ाकर यदि दिन के लड़कों को पढ़ानेवाले मास्टरजी पढ़ायें तो ठीक है या और मास्टरजी रख लिये जायें ।

नाहरसिंह : क्यों, कालू के पढ़ाने में क्या हर्ज है ?

रूपसिंह : अजी, हर्ज यह है कि हम चाहते हैं कि कालू अभी और शहर जाकर पढ़े, वहां से काश्तकारी के बारे में सबकुछ सीखकर आये और फिर यहां आकर खेती करे ।

नाहरसिंह : हां हरनामसिंह, यह रूपा ठीक कहता है । अच्छा भाई, तुम्हारी यह बात भी मानी । कल्याणसिंह, ठीक है भाई । तुम्हारी पढ़ाई में पंचायत नुकसान नहीं पहुंचायगी । इसमें भी तो पंचायत का भला है कि उसमें पढ़े-लिखे आदमी आयें । पर देखो बेटा, पढ़-लिखकर शहर में नौकरी न कर लेना । हां, हमें तुम्हारी सख्त जरूरत रहेगी । हरनामसिंह भाई, इस लड़के को आगे

पढ़ाओ। यदि किसी बात की कमी होगी तो हम पूरी करेंगे।

हरनाम : सब आप लोगों की दया है, नम्बरदारजी।

नाहरसिंह : अच्छा, तो भाइयों, अब पंचायत समाप्त होती है।

[सब जाते हैं।]

तीसरा दृश्य

[हरनामसिंह के मकान का बाहरी भाग। रामो इन्त-जार कर रही है। ताक में दिया जल रहा है। तभी हरनामसिंह और कालू आते हैं]

रामो : क्यों जी, हो आये पंचायत में? कैसी रही आज की पंचायत? क्या रूपा भी आ गया था वहां?

हरनाम : आज तो पंचायत का श्रीगणेश ही बड़ा अच्छा हुआ। फिर अन्त तो अच्छा होता ही। मैं और विजयपालसिंह गले मिले। फिर रूपा और विजयपालसिंह एक-दूसरे से बैर-भाव भूलकर बोले। एक टुकके से हम लोगों तमाखू पिया।

रामो : तुम वहां पंचायत करते रहे, इधर नम्बरदारिन आई हुई थीं। साथ में उनकी बहन भी थी। कालू के ब्याह की बातें करती रहीं।

हरनाम : तुम्हारे तो दिमाग की चूल कुछ ढीली है। मैं उसे आगे पढ़ाने की सोच रहा हूं और तुम बहू के लिए घूम रही हो।

रामो : क्या अब यह जनमभर पढ़ता ही जायगा?

हरनाम : जनमभर ! कहीं पागल तो नहीं हो गई तू, रामो ।

रामो : मैं कहती हूं, इसका ब्याह करो, बहू घर आये, तो मैं तीरथ कर आऊं ।

हरनाम : लो जी, यह भी खूब रही ! हम तो काश्तकारी और देश के भले के लिए सोच रहे हैं और यह हैं कि इन्हें तीरथ और बहू की पड़ी है । कहीं उसने दहेज-वहेज की बात तो नहीं की ?

रामो : हां-हां, मुझे तो उनकी बातों से पता चल रहा था कि दहेज में काफी-कुछ मिलेगा ।

हरनाम : बस, सारी इतनी-सी बात थी । सीधी तरह से क्यों नहीं कहती कि तुझे धन-दौलत का लालच है ? अरी, कभी दूसरों के पैसे से भी आजतक किसीकी पटी है । फिर, मैं तो इस दहेज-वहेज सबके खिलाफ हूं ।

रामो : तो फिर मेरे ब्याह में इतना क्यों मांगा था ?

हरनाम : मैंने मांगा था ? मुझपर इतना अन्याय न करो, रामो । वह सब मेरे पिताजी की इच्छा थी । वह जमाना ही कुछ और था । किसीमें इतनी हिम्मत नहीं होती थी कि उन बूढ़ों के खिलाफ कुछ कह सके । पर आज तो समय बदल रहा है । और हमें समय के साथ बदलना है । आज हमें अपना भला नहीं, समाज का भला सोचना है । हमारा कर्तव्य अपने प्रति न होकर समाज के प्रति सोचना होगया है, उसमें चाहे हमारा अपना घाटा क्यों

न हो ।

रामो : यह सब तो ठीक है, पर हमारे भी घर में बेटा है ।

अगर हम लेंगे नहीं तो उसके ब्याह में शोभा के लिए देंगे कहां से ?

हरनाम : अरी, जब हम लेंगे नहीं तो हम देंगे ही क्यों ?

रामो : तो तुम पुरखों के चलाये हुए रीति-रिवाज हटा दोगे ?

हरनाम : जो रीति-रिवाज समाज के लिए नुकसान दें, उन्हें तो हमें हटाना ही होगा । चाहे वे पुरखों ने चलाये हों, चाहे किसी और ने । आज का समाज पुराने ढांचे पर चल नहीं सकता । और सुनो, पहली बात तो यह है कि मैं दहेज का विरोधी हूं और दूसरी यह कि मैं चार साल तक लड़के की शादी के हक में नहीं हूं ।

रामो : तुम्हारी बातें मेरी समझ में तो आती नहीं । अपनी ही हेकड़ी रखते हो, जैसे लड़का मेरा तो कुछ है नहीं ।

हरनाम : यह मैंने कब कहा । पर मैं लड़के को पढ़ाना चाहता हूं ।

रामो : पढ़ाई के लिए रुपये कहां से लाओगे ? बूढ़े होने आये हो । लड़का खेती-बाड़ी में हाथ बंटाये, इससे बढ़कर लड़के के लिए और क्या हो सकता है ?

हरनाम : जीभर के मेहनत करूंगा । अनाज पैदा होगा और लड़का पढ़ता जायगा । जब वह पढ़कर आ जायगा तब वह खेतों को सम्भाल लेगा और मैं आराम कर लूंगा ।

कालू : (आते हुए) किस बात पर चर्चा हो रही है, काका ?

हरनाम : कुछ नहीं, तेरी मां की ज़रा बोलने की आदत है न !

सो बेचारी दिनभर चुप रहने के कारण अपनी थकान उतार रही थी । तू कहां गया था, रे ?

कालू : नम्बरदार अपने साथ ले गये थे । पढ़ाई-लिखाई की बातें करते रहे । चाचा विजयपालसिंहजी भी वहीं थे । (हँसता है) कहते थे, बेटा, कभी पैसे-वैसे की कमी हो तो हमें लिख देना । विजयपालसिंह तो बड़े बढ़िया आदमी हैं, काका ।

हरनाम : हां बेटा, मैं, नम्बरदार और विजय तीनों ही पुराने दोस्त हैं । अच्छा, अब तू सो जा । काफी रात होगई है । कल तुझे तेरे मामा के यहां भेज दूंगा । वहीं तुझे दाखिल करा आयेंगे । पर अपना फर्ज ध्यान में रखना ।

कालू : अवश्य काका ! हम किसान हैं और हमारा कर्तव्य है देश को धनधान्य से भरपूर करना ।

हरनाम : जुग-जुग जियो ।

[पटाक्षेप]

: ७ :

सपनों के बहाने

पात्र

राधेश्याम	:	गांव के एक पुरोहित
अब्दुल करीम	:	मौलवी
सुन्दर	:	राधेश्याम का नौकर
गणपति	:	एक किसान
भगवती	:	गणपति की पत्नी
पुजारी	:	मन्दिर का पुजारी

पहला दृश्य

[गांव में पंडित राधेश्याम की चौपाल। पंडित अपनी चौपाल पर बैठे हुक्का पी रहे हैं। तभी मौलवी अब्दुल करीम आते हैं।]

अब्दुल करीम : (आते हुए) कहिये, पंडितजी, क्या हाल-चाल है ?

राधेश्याम : अरे वाह-वाह, हमारे भाग्य खुल गये जो आज आप इधर आ निकले। सुनाइये, मौलवीसाहब, ठीक-ठाक तो हैं। आइये, बैठिये। वाह भाई, वाह खूब आये।

[मौलवीसाहब एक मूढ़े पर बैठते हैं]

अब्दुल : भाई, बहुत दिनों से मिला नहीं था, सोचा कि आज

चलूँ। चलकर आपके दर्शन ही करूँ। इसी विचार से इधर चला आया।

राधे : चिलम तो पीजियेगा ही ?

अब्दुल : हां-हां, पी लूंगा। यह भी भला कोई पूछने की बात है।

राधे : (हुक्के का कश लगाते हुए) ओ सुन्दर !

सुन्दर : (दूर से, हकलाता हुआ) आ-आ-आ-आया...मा...मा...
मालिक (आता है) क्या हु-हु-हुक्म है ?

राधे : अरे, जल्दी से शरीफ़ भाई के यहां से हुक्का ले आ।
कहना, पंडितजी ने मंगवाया है। उनके यहां मौलवी
अब्दुल करीम आये हैं। उनके लिए चाहिए।

सुन्दर : अ...अ...अभी, ल...ल...लाया... (जाता है)

राधे : और सुनाओ, आजकल काम-काज का क्या हाल-चाल है ?

अब्दुल : तुमसे क्या छिपा है, पंडितजी। बुरा ही हाल है।
सुन्दर जबतक हुक्का लाये, तबतक लाओ दो कश चिलम
से ही लगा लें।

राधे : (हुक्के से उतारकर चिलम देते हुए) हां-हां, क्या हर्ज है। (मौलवी चिलम पीते हैं) हां भाई, काम-काज के मामले में अपना भी यही हाल है। असल बात यह है, मौलवीसाहब, कि लोगों के मन से अब धरम-करम के भाव उठते जा रहे हैं। घोर कलजुग आ गया है, घोर
• कलजुग। अब इस धरती का ठिकाना नहीं है।

अब्दुल : (सांस भरकर) दीखता तो मुझे भी यही है, पंडितजी । लोग अब अपने बड़े-बूढ़ों की राह पर चल ही नहीं रहे हैं । पहले यह था कि घरबैठे रोटी खाने को आ जाती थी । और अब पूरी मेहनत करो तो भी रोटी नसीब नहीं होती ।

राधे : बुरा हाल है, साहब ! पुरोहिताई में तो अब बहुत ही कम बचत है । कुल-पुरोहित को तो अब कोई पूछता ही नहीं । जिससे चाहा, व्याह पढ़वा लिया । जिससे चाहा क्रियाकरम करवा लिया । और जनाब, अपना रहा-सहा बेड़ा गर्क कर दिया है इन समाज-सुधारकों ने । हरेक को पढ़ाने पर तुले हुए हैं । दिन-रात की पाठशालाएं खोल दी हैं । बच्चों की तो बात छोड़ो, बड़े-बूढ़ों तक को पढ़ा रहे हैं । अपनी पाठशाला का काम ही ठप्प होगया है, नहीं तो पचास-साठ उसीमें से निकाल लेते थे ।

अब्दुल : यही अपने साथ हुआ है, भैया । अपने मदरसे में भी अब कोई नहीं आता । इस नई रोशनी ने तो हमें कहींका नहीं छोड़ा । ये कल के छोकरे अपने-आपको हमसे ज़्यादा अक्लमंद मानने लगे हैं । किसान भी अब बहुत समझदार होते जा रहे हैं । पुरानी बातों से तो लोगों का यकीन ही उठता जा रहा है । ये नई-नई योजनाएं ! न जाने इस मुल्क का क्या होगा ?

राधे : मुल्क का नहीं, अपना और हमारा कहिये मौलवीसाहब ! कभी लोग हमारे पुरखों को देवता समझकर पूजते थे ।

अब हमें निठल्ला और निकम्मा समझते हैं ।

अब्दुल : बिल्कुल यही बात अपने साथ है, पंडितजी ।

[तभी सुन्दर हुक्का लेकर आता है]

सुन्दर : य...यह...यह...ली...लीजिये, हुक्का । व...व...वो कहते हैं कि मौ...ल...वी सा...हेब...इ...इधर भी...हो...के...जायं ।

अब्दुल : बहुत अच्छा । अपना क्या है ! आज घूमने निकले हैं तो उनसे भी मिलते चलेंगे ।

राधे : सुन्दर, ज़रा चिलम तो ताज़ी कर ला ।

सुन्दर : अच्छा जी । (जाने लगता है)

अब्दुल : अरे भाई, ज़रा सुनना । तम्बाकू तेज़ डालना ।

सुन्दर : अ...अच्छा जी ।

राधे : अच्छा जी का वच्चा । जा, जाकर जल्दी काम कर ।

सुन्दर : अच्छा...जी ।

राधे : (रुककर) क्यों, क्या सलाह है, मौलवीसाहब । एक बाजी चौपड़ ही खेल ली जाय ।

अब्दुल : अजी वाह, क्या बढ़िया बात कही ! इसमें सलाह का क्या काम । बिछाओ चौपड़, हो जायं दो-दो हाथ ।

[राधेश्याम चौपड़ बिछाते हैं और कौड़ियां फेंकते हैं]

राधे : यह लो आ गये पच्चीस, चल निकले हम तो ।

अब्दुल : अपने कौन पीछे रहनेवाले हैं ! (कौड़ियां फेंककर)

यह लो गिन लो ! हैं कि नहीं पैंतीस ?

राधे : बस साहब ! चौपड़ तो राजा नल खेल गये । राजाओं

का खेल है, कोई हँसी-मज़ाक थोड़े ही है ! या फिर उनके बाद राजा युधिष्ठिर ने खेला ।

अब्दुल : हमारे भी एक बादशाह हुए हैं । बहुत बढ़िया खेलते थे । (सोचते हुए) नाम भूले जा रहा हूँ । बड़ा भला-सा नाम है ।

राधे : ऐसे कई बार मैं भी बातें भूल जाता हूँ । अजी, मैं दो-चार नाम और गिनाने को था । ध्यान में ही नहीं आ रहे । खैर, चलो छोड़ो । (कौड़ियां फँकते हुए) यह लो पैंतीस (फिर दुबारा फँककर) और यह लो चार । पिट गई तुम्हारी गोटा ।

अब्दुल : चलो, फिर क्या हुआ । (हुक्का का कश लगाकर) कुछ दिन कहीं सैर करने चला जाय, दोस्त राधेश्याम, तो कैसा रहे ? इन दिनों हम तो घरेलू झगड़ों से इतना उकता गये हैं कि क्या कहें ।

राधे : विचार तो कोई बुरा नहीं । असल में हम भी इन दिनों यहां की हवा से उकताये हुए हैं ।

अब्दुल : सो तो दीखता ही है । फिर ज़रा हवा-पानी भी बदल जायगा । तो पंडितजी, बात पक्की हो गई ।

राधे : अरे वाह ! सवा सोलह आने । (बीच-बीच में हुक्का चलता है) अब सोचने-विचारने का सवाल नहीं है । बस, तैयारी कर लो ।

अब्दुल : तैयारी करने में कौन-सी देरी लगती है ! दो जोड़े कपड़े भोले में डाले, लोटा-डोरी ली और चल दिये ।

[तभी चौधरी गणपतिसिंह का प्रवेश]

गणपति : बन्दगी मौलवीसाहब । पालागन, पंडितजी ।

अब्दुल : जीते रहो, खुदा खुश रखे ।

राधे : भगवान बड़ी उम्र करे । कहां से आ रहे हो ? दिनभर दीखे ही नहीं ।

गणपति : पास ही के गांव में गया था । माधो के बैल बिकाऊ थे, सो वे खरीदने थे । भाव नहीं पटा, लौट आया । हां, सुनाओ तो, यह सफ़र की क्या बातें हो रही हैं ? कहीं बाहर जाने के इरादे हैं क्या ?

राधे : भई, हैं तो सही, भगवान पूरे कर दें तो । लो आओ, चौपड़ की एक बाजी लगाओ ।

गणपति : चौपड़ खेलने का तो अब समय ही नहीं मिलता, महाराज । हां, सफ़र की क्या बात कर रहे हो ?

अब्दुल : अरे भैया ! तुमसे क्या छिपाना ! बैठे-बैठे उकता गये थे । बरसों से कहीं बाहर गये ही नहीं, सो आज दोनों ने सोचा कि चलो, कुछ दिन बाहर ही घूम आयें ।

राधे : तुम्हारी इच्छा हो तो तुम भी साथ चलो । एक से दो भले, दो से तीन । सफ़र में तो जितने अधिक आदमी हों, आनन्द बढ़ जाता है । क्यों, भाई अब्दुलकरीम ?

अब्दुल : और क्या, फिर गणपति है भी दिल का सोना । तैयार हो जाओ, गणपति चौधरी । सोचने-विचारने का कोई काम नहीं है ।

राधे : अरे हां, इसमें ऐसी सोचने-विचारने की क्या बात है ।

खेत बो ही चुके हो । पानी भी एक-दो दे ही दिये होंगे ।
 गणपति : हां, सो तो ठीक ही है । पर फिर भी घर के और
 बहुत-से काम रहते ही हैं ।

राधे : यह घर के काम-काज तो ज़िन्दगीभर खत्म नहीं होंगे ।
 अब मुझीको ले लो, घरेलू ज़िन्दगी के झंझटों में फंसा-
 फंसा ही बूढ़ा होगया हूं । अब पछता रहा हूं कि कुछ
 धरम-पुन्न नहीं किया और भैया, यही हाल एक दिन
 तुम्हारा होगा ।

अब्दुल : फिर कौन-सी कोई महीनों की बात है, ज्यादा-मे-
 ज्यादा छः-सात दिन । क्यों, पंडितजी ।

राधे : और क्या ! आखिर हमें भी तो कोई देशनिकाला नहीं
 मिल रहा !

अब्दुल : यह बतला दूं, चौधरी गणपति । यह मौका चूक
 गये तो फिर पछताओगे । हमारे जैसे साथी भी मिलने
 के नहीं ।

राधे : अरे नहीं । ऐसी भी कौन-सी बात है, मौलवीसाहब ।
 चौधरी चलेगा हमारे साथ । इस जैसा साथी न हमें
 मिलने का, और न हमारे जैसे साथी इसे मिलने के ।
 जाओ भैया, घर जाकर तैयारी करो सफ़र की ।

गणपति : पहले मुझे घर तो हो आने दो । नन्दू की मां से
 पूछ लूं ।

राधे : अरे, वह कोई नांही करनेवाली है । बड़ी भली औरत
 है । बड़ी इज्जत करती है हमारी । हमारा नाम लोगे

तो सब काम बन जायगा ।

गरणपति : वह तो मैं जानता हूँ । पर फिर भी घर से आकर उत्तर दूंगा ।

राधे : उत्तर मिला-मिलाया है । हमारी तरफ से बात पक्की है । यहां से चालीस कोस पर बड़ा भारी मेला लग रहा है । देखोगे तो तबीयत खुश हो जायगी । चलेंगे भी पैदल ही ।

गरणपति : अच्छा, तो बात पक्की-सी ही समझो । अगर न जाने की बात हुई तो मैं यहां आकर बता जाऊंगा ।

राधे : अब न जाने का कोई सवाल नहीं है, जी । चलेंगे और अवश्य चलेंगे कल सुबह ही यहां से चल देंगे ।

गरणपति : जैसी बजरंगबली की इच्छा । मैं घर हो आऊँ ।
(जाता है)

राधे : (हँसता है) कहो, मौलवीसाहब कैसी रही ! कैसा पासा फँका, निकलने का नाम भी न ले सका ।

अब्दुल : मान गये, गुरू । तुम्हारे जोड़ का इस गांव में दूसरा नहीं है, पंडित । (हँसते हैं)

राधे : अरे भाई, अपना जजमान है । हम हैं इसके पुरोहित । रास्ते में साथ होगा तो कुछ टहल-सेवा तो करेगा ही ।

अब्दुल : (हँसते हैं) हम लोग तो स्वर्ग के ठेकेदार हैं जी, धरती पर । कोई हमारी सेवा नहीं करेगा तो फिर किस-की करेगा ?

राधे : आखिर हम विद्वान आदमी हैं, भाई ! इसे तो बेचकर

खा जायंगे। यह समझो, सफर में सुन्दर न लिया, गणपति ले लिया।

अब्दुल : और क्या ! अच्छा, तो मैं भी चलूं। घरवाली राह देख रही होगी। फिर उसे बाहर जाने की बात पर राजी भी करना है। तुम्हें भी तो अभी पूछना होगा पंडिताइन से।

राधे : (हँसते हैं) अरे, हम तुम लोगों की तरह जोरू के गुलाम नहीं हैं। जोरू हमारी गुलाम है।

अब्दुल : (हँसते हैं) वह तो हम अच्छी तरह जानते हैं। पंडिताइन के सामने भीगी बिल्ली बन जाते हो। (दोनों हँसते हैं) अच्छा, तो मैं चलूं !

राधे : बस कल दिन निकलते ही आ जाना।

अब्दुल : बेफिक्र रहो। यह सैर भी खूब रहेगी। (दोनों हँसते हैं और हुक्का पीते हैं)

दूसरा दृश्य

[गणपति का घर। वह मकान के भीतर आकर अपनी पत्नी को आवाज देता है]

गणपति : (ऊँचे स्वर में) अरी, सुनती हो भागवान, कहां हो ?

भगवती : (दूर से) ऐ हैं। बस आते ही शोर मचाना शुरू कर दिया ! (पास आकर) बच्चे को सुला रही थी। इतना चीख क्यों रहे हो ? ले आये बैल, कितने में पटा सौदा ?

गणपति : कहां पटा सौदा ? एक बैल कुछ लंगड़ाता था। •

भगवती : फिर इतनी देर कहाँ लगा दी ? जल्दी आते तो कुछ काम में ही हाथ बटाते । अब भैंसों को सानी भी मैं करूँ ! बैलों को पानी भी मैं पिलाऊँ । चक्की पीसूँ, आखिर क्या समझ रक्खा है तुमने !

[खड़ी खाट को बिछाकर गरणपति उसपर बैठता है]

गरणपति : पर इतनी तेज होने की इसमें क्या बात है ! एक दिन थोड़ा-सा काम ज्यादा करना पड़ गया तो लगी सिर धुनने ! आखिर मैं भी तो खून-पसीना एक करके रोटी कमाता हूँ । मैं तो कभी नहीं चीखता । न होता मेरे साथ गृहस्थी का चक्कर तो मैं भी यह झंझट छोड़ किसी संन्यासी का चेला बनकर मस्ती से अपनी जिन्दगी बिताता !

भगवती : ऐ है ! अब लद गया चेला बनने का ज़माना ! दुनिया बहुत बदल चुकी है । हाड़ तोड़कर ही रोटी मिलती है आजकल !

गरणपति : तेरा तो दिमाग खराब हो गया है । यह हिन्दुस्तान है, हिन्दुस्तान ! यहाँ अब भी साधू-संन्यासियों की बड़ी मानता है ।

भगवती : साधू-संन्यासी कोई और होते हैं, तुम्हारे जैसे नहीं । न कुछ आय, न कुछ जाय । बन गये स्वामीजी, (तेज होकर) बड़ी धौंस देते हैं साधू बनने की...

गरणपति : (बात काटकर) छोड़ इस झगड़े को । मेरी बात सुन ।

भगवती : कहो, क्या कहना चाहते हो ?

गरणपति : मैं छः-सात दिन के लिए ज़रा बाहर जा रहा हूँ ।

भगवती : कोई खास काम आ पड़ा है, क्या ?

गरणपति : खास काम क्या ! ज़रा सैर-सपाटे का विचार हुआ है ।

भगवती : वाहजी धन्ना सेठ ! घर में नहीं खाने को, रानी चली भुनाने को । शरम नहीं आती यह कहते कि सैर-सपाटे को जा रहा हूँ । देखते हो मेरी तबीयत ठीक नहीं रहती, मुन्ना बीमार है, ऐसे में तुम्हें पड़ी है सैर की !

गरणपति : अरी, बड़ा भारी मेला लग रहा है । देख आऊंगा । हों सका तो बैलों की जोड़ी भी वहीं से खरीद लाऊंगा ।

भगवती : बैलों के लिए तो ऐसे कह रहे हो, जैसे आस-पास कहीं मिलते ही नहीं । मंगल को जाकर पैठ से खरीद लाना । गागर उठाओ, नहा-धोकर आओ और खाना खाने बैठो ।

गरणपति : तबीयत कुछ घुट-सी रही है । नहाने की इच्छा नहीं । यहीं हाथ-मुंह धोये लेता हूँ ।

भगवती : यह तो बताओ, जब गांव में जल्दी आगये थे तो घर क्यों नहीं चले आये । कहां बैठे रहे इतनी देर ?

गरणपति : पंडित राधेश्यामजी की बैठक पर कुछ देर लग गई । वहीं मौलवी अब्दुल करीम भी आये हुए थे । चौपड़ चल रही थी । कुछ इधर-उधर की बातें हो रही थीं । पंडितजी तुम्हारी बड़ी तारीफ कर रहे थे, कह रहे थे—
ऐसी भली औरत इस गांव में दूसरी नहीं है । साक्षात् लक्ष्मी

है, लक्ष्मी ।

भगवती : (नरमी से) अजी रहने भी दो, मेरी तारीफ की ऐसी क्या जरूरत है । पर किस मिलमिले में चल निकली मेरी बात ।

गणपति : अरी, यही बाहर जाने की बात हो रही थी । मौलवी-साहब और पण्डितजी दोनों ही मेला देखने और सैर करने बाहर जा रहे हैं । मुझसे बोले—तुम भी चलो हमारे साथ, जग अच्छी निभेगी । मैंने कहा—नन्दू की मां कहां जाने देगी ! वह बोले—नहीं, वह रोकने की नहीं । बड़ी ही भली औरत है । वह समझती है कि जिन्दगी में आदमी को आराम की भी जरूरत है । आदमी आदमी है, कोई कोल्हू का बैल तो है नहीं !

भगवती : सो तो ठीक है । मैं कब कहती हूं कि आदमी जिन्दगी में आराम न करे । फिर भी घर तो देखना ही पड़ता है । मैं समझी थी; तुम अकेले ही जाना चाहते हो । अगर साथ है तो घूम आओ दो-चार दिन ।

गणपति : नहीं, अब नहीं जाऊंगा । आखिर तुम अकेली क्या-क्या काम कर पाओगी । फिर नन्दू की तबीयत भी खराब है ।

भगवती : ओहो, पर तुम कोई जादू-टोना करके तो उसकी तबीयत ठीक नहीं कर सकते । हकीम से दवाई आती है सो तो मैं हो ही आया करूंगी ।

गणपति : नहीं, अब नहीं, फिर कभी सही । रोटी खाकर अभी

मैं नाहीं कर आऊंगा, पंडितजी से ।

भगवती : (हँसकर) वाह जी, अब लगे नखरे बघारने । मैं कहती हूँ, कुल-पुरोहित चाहते हैं तो घूम आओ उनके साथ । पर इस बात का ध्यान रखना कि उनकी सेवा में कोई कोर-कसर न रह जाय ।

गणपति : इसी बात से तो मैं घबरा रहा हूँ कि उन लोगों के साथ सारा काम मुझीको देखना पड़ेगा । कभी हुक्का भर, कभी यह कर, कभी वह कर ।

भगवती : फिर क्या हुआ ! बड़ों की सेवा से आदमी को यश ही मिलता है । इन छोटी-छोटी बातों से घबरा नहीं जाँते ।

राधे : (बाहर से आवाज देते हुए) अरे भई, गणपति चौधरी हैं क्या घर में ?

भगवती : लो, पंडितजी खुद ही आ गये ।

गणपति : आ जाओ पंडितजी, आ जाओ ।

[राधेश्याम घर के भीतर आते हैं]

भगवती : चरण छूती हूँ, पंडितजी ।

राधे : जीती रहो, बेटी । अरे, सुनाओ भाई चौधरी ! तैयार हो न चलने को ?

भगवती : हाँ महाराज, यह जरूर जायेंगे आपके साथ । भला गुरुजनों की सेवा का मौका कब-कब मिलता है ।

राधे : जुग-जुग सुहागवती रहो, बेटी । भगवान तुमपर अपनी कृपा बनाये रखें । मुझे पूरी उम्मीद थी कि तुम हमारे

साथ चलने से नाहीं नहीं करोगी ।

गरणपति : बैठो न, पंडितजी, चिलम भर के लाऊं आपके लिए ।

राधे : अरे, इसकी कोई जरूरत नहीं । बस, अब तो मैं चलूंगा अच्छा तो पौ फटते ही हमारे यहां पहुंच जाना (जाते हैं)

गरणपति : ऐसा ही होगा, महाराज । कल सुबह ही आपके पास पहुंच जाऊंगा । (रुककर) अरी भगवती, यह तूने क्या किया ? तुझे मैंने कहा नहीं था कि मैं नहीं जाना चाहूंगा । इनकी टहल-सेवा के मारे मेरा नाक में दम आ जायगा ।

भगवती : पहले सोचा होता । उनकी चौपाल पर होकर क्यों आये थे ? जल्दी ही अब खाना खाओ और सामान बांधकर रख दो । सुबह उठते ही चले जाना ।

गरणपति : अच्छा, जैसी भगवान की इच्छा !

तीसरा दृश्य

[राधेश्याम, अब्दुल करीम और गरणपति चौधरी सफ़र में]

राधे : थककर चकनाचूर हो गया मैं तो ।

अब्दुल : यही हाल अपना है, पंडितजी । थकावट के मारे सुन्न हो रही है देह ।

गरणपति : आप लोगों का अभी से यह हाल है तो आगे क्या होगा ? लाओ, दोनों जने अपना सामान मुझे दे दो, ताकि चलने में आसानी हो ।

राधे : अरे नहीं, ऐसी भी क्या बात है, भाई !

अब्दुल : गणपति का दिल न दुखाओ, पंडितजी । मान लो इसकी बात भी ।

राधे : अच्छा भाई ! (दोनों अपना बोझ उसे दे देते हैं ।)

गणपति को हम नाराज़ नहीं कर सकते ।

अब्दुल : अब जग तेज़-तेज़ चलो । जल्दी-जल्दी चार-पांच कोस और तय कर लें !

राधे : आज सूरज भगवान भी आग बरसा रहे हैं । गणपति, थक जाओ तो हमें बता देना भाई ! हमें तेरा बड़ा ध्यान है ।

गणपति : (व्यंग से) सो तो मैं जानता हूं, महाराज । (चलते जा रहे हैं ।)

राधे : भाई ! अब तो इस जगह कुछ देर आराम किया जाय और दोपहर का खाना भी यहीं खा लिया जाय । सामने के कुएं से पानी तो ले आना, गणपति चौधरी ।

गणपति : अभी लाता हूं, पंडितजी (जाता है)

राधे : (हँसकर) कहो, मौलवीसाहब । कैसा रहा हमारा चुनाव ?

अब्दुल : दाद देनी पड़ती है आपकी अक्ल की । इसके साथ सफ़र का पता भी न चलेगा ।

राधे : अभी तो देखते चलो । रात की रोटी भी इसीसे बनवायेंगे । यह भी क्या याद करेगा कि किनके साथ सैर करने आया था ।

अब्दुल : बुद्धू है । अगर दुनिया में इस तरह के मूरख न हों तो हमें-तुम्हें कौन पूछे ?

राधे : अब चुप करो, वह आ रहा है ।

[तीनों बैठकर खाना खाते हैं । खाना खाने के बाद]

राधे : खाने में मजा आ गया । वाह क्या स्वादिष्ट था । भगवती खाना भी खूब बनाती है ।

गणपति : कभी हमारे हाथ का बनाया हुआ खाना भी खाकर देखो, पंडितजी ।

राधे : अरे, मैं तो भूल ही गया था ! तुम तो इस काम में उस्ताद हो । अच्छा, गाम को दिखाओ अपना हुनर । हमारे लिए खीर बने और मौलवीजी के लिए हलवा ।

अब्दुल : अरे हमारा क्या है, भाई, जो खिला दोगे, खा लेंगे ।

राधे : हलवा ही बनेगा जी । हमारे गणपति में सेवा-भावना बहुत है । छः कोस पर ही छोटा-सा कस्बा पड़ता है । उसके बाहर एक छोटी-सी सराय है । वहीं ठहरेंगे । कुछ बर्तन तो हैं ही, कुछ भटियारिन से किराये पर ले देंगे । सामान गणपति बाजार से खरीद लायेगा । क्यों गणपति ?

गणपति : जी हां ।

अब्दुल : जीते रहो, मेरे शेर, जीते रहो । आज रात को खीर और हलवा बन ही जाय । ऐसा खाना खिलाओ कि हम जिन्दगीभर न भूलें ।

गणपति : अजी, भूलने का क्या काम ! याद रखोगे कि
• चौधरी गणपति के साथ भी कभी यात्रा की थी ।

राधे : अच्छे साथी हमेशा ही याद रहते हैं । आओ फिर आगे की यात्रा करें । आराम करने को आज की पूरी रात मिल जायगी । कल शाम को मेले में मिल ही जायेंगे । फिर चलें । (तीनों चलते हैं)

चौथा दृश्य

[सराय के बाहर का आंगन । राधेश्याम और अब्दुल करीम बातें कर रहे हैं]

अब्दुल : लो पंडितजी, जगह तो रातभर के लिए अच्छी मिल गई । खुली हवा है, छत पर या आंगन में, जहां मरजी है, सोओ । कल सुबह उठते ही यहां से चल देंगे और दिन का खाना कहीं रास्ते में किसी पेड़ के नीचे बैठकर बनायेंगे ।

राधे : बिल्कुल ठीक । (सोचते हुए) गणपति को गये काफ़ी देर हो गई है, अभी तक नहीं लौटा । अभी उसे खाना बनाने में भी काफ़ी देर लगेगी । भूख के मारे बुरा हाल हो रहा है ।

अब्दुल : अरे पंडितजी, इसमें घबराने की भला क्या बात है । उसके आते ही बाजार चलेंगे और थोड़ा नाश्ता कर आवेंगे ।

राधे : बात पते की कही ।

अब्दुल : वह भी तो कुछ खा-पीकर आयेगा बाजार से ।

राधे : जी नहीं, यह बात कभी नहीं हो सकती । वह हम गुरु-जनों को खिलाने से पहले कभी नहीं खा सकता । लो,

वह आ ही गया ।

अब्दुल : बड़ी देर लगा दी आने में, गणपति भैया ! क्यों, कोई खास बात हो गई क्या ? हम दोनों तो यहां घबरा रहे थे । कहीं कोई भगड़ा वगैरह न हो गया हो ।

गणपति : वाह, ऐसी कोई बात नहीं थी । ज़रा बढ़िया चावल ढूँढने में देर लग गई, फिर बादाम ढूँढता रहा । नया शहर है । इसलिए कुछ वक्त लग गया । फिर कल पौ फटते ही चल देना है, इसलिए कल के लिए भी सामान खरीदना था ।

राधे : मतलब यह कि तुम कल के लिए भी सामान खरीद लाये ।

गणपति : और क्या ?

अब्दुल : रुपये कम तो नहीं पड़ गये थे ?

गणपति : नहीं महाराज, उल्टा, यह एक रुपया बचा ही है ।
लो, इसे रख लो ।

राधे : (रुपया लेते हुए) बहुत अच्छा, जीते रहो । हां भाई, कहो तो हम भी कुछ देर कस्बे की सैर कर आयें ?

गणपति : जरूर, जरूर ! पर जल्दी लौट आना ।

राधे : बस आना-जाना ही समझो । सुनो, खाना बनाने के बाद आग मत बुझा देना । खाने के बाद हुक्का पियेंगे ।

[कहते हुए दोनों जाते हैं । गणपति खाना बनाने में लगता है । मंच पर थोड़ी देर के लिए अन्धकार, कुछ देर बाद पुजारी आता है ।]

पुजारी : बड़े जतन से खाना बना रहे हो, चौधरी ।

गणपति : बन चुका, महाराज । आज ज़रा पंडितजी और मौलवीसाहब को अपने करतब दिखाने हैं । बेचारे आ ही रहे होंगे । भूख के मारे उनके बुरे हाल होंगे ।

पुजारी : भूख के मारे ! अरे भाई, पर वे तो कस्बे में श्यामू हलवाई की दुकान पर बैठे ठाठ से पूरियां उड़ा रहे हैं ।

गणपति : हूं ! यह बात ! फिर यह खीर-हलवा किसलिए बनवाया है ?

पुजारी : इसे तुम ठाठ से खाना, चौधरी । (पुजारी जाता है ।)

गणपति : हूं ! वे दोनों अभी तक नहीं आये । भूख के मारे अपना बुरा हाल है । पता नहीं, कहां-कहां मटरगस्ती कर रहे होंगे । खा रहे होंगे बाजार में बढ़िया-बढ़िया चीजें ! कहां फंस गया इनके चक्कर में ।

[दोनों आते हैं]

गणपति : बड़ी देर लगा दी आप लोगों ने ?

राधे : अरे, क्या बतायें भैया । मजूरपुरवाले हरफूलसिंह मिल गये थे । बातों-बातों में सपनों की बातें चल निकलीं । बहस छिड़ गई । वह तो चले गये, पर हम और मौलवी-साहब अड़ गये ।

गणपति : क्यों सपनों की ऐसी क्या बात थी ?

अब्दुल : अरे यही कि कौन बढ़िया सपने देखता है । पंडितजी कहते हैं, मुझे बढ़िया सपने आते हैं और मैं कहता हूं मुझे ।

राधे : सपने तो तू भी देखता होगा, गणपति ?

गणपति : जी हां, कभी-कभी मुझे भी दीख जाते हैं । पर छोड़ो

इन सपनों की बातें । आओ, पहले पेट-पूजा करें । भूख के मारे बुरा हाल है ।

राधे : अरे भाई, भूख के मारे तो अपना भी बुरा हाल है, पर शर्त जो लग गई है हममें और मौलवीसाहब में । बताओ क्या करें ?

गणपति : कैसी शर्त ?

अब्दुल : अरे, यही कि आज रात को हम तीनों जने सपने देखेंगे । हम तीनों भूखे ही सो जायेंगे और सुबह उठकर अपना-अपना रात का देखा सपना सुनायेंगे । जिसका सपना सबसे बढ़िया होगा वह पहले नम्बर पर खाना खायगा । जिसका सपना दूसरे दर्जे का होगा वह दूसरे नम्बर पर खायगा, तीसरा बचा-खुचा खायगा ।

गणपति : पर महाराज, अपना तो भूख के...

राधे : (बात काटकर) अब क्या हो सकता है, चौधरी ! एक रात भूखा रहने से हममें से कोई मर थोड़े ही जायगा !

गणपति (उदासी से) अच्छा जैसी पंचों की राय ।

अब्दुल : अच्छा भाई, अब सोने की बात करो ।

[वहीं तीनों सोते हैं । मंच पर कुछ देर के लिए अन्ध-कार । फिर सुबह होती हुई दिखाई देती है । राधेश्याम पंडित राम का नाम लेकर उठते हैं ।]

राधे : जागो न अब अब्दुल भाई !

अब्दुल : (आँखें खोलते हुए) अरे वाह ! दिन चढ़ आया !

गणपति अभी तक सो रहा है ! जगाऊं इसे भी !

राधे : नहीं, अभी इसे सोने दो । हम लोग तबतक नहा-धो लें । वह कुछ नाराज है ।

अब्दुल : हां, रात बेचारे को भूखा सो जाना पड़ा ।

राधे : कितनी ही देर तक उसकी आंख नहीं लगी ।

अब्दुल : अजी, भूख के मारे नींद किसे आती है !

राधे : आओ, फिर जल्दी नहा-धो लें ।

[कुछ देर बाहर जाकर फिर लौटते हैं ।]

अब्दुल : अब जगाओ इसको । अपने-अपने सपने सुनायें और कुछ खायें । भूख भड़क उठी है ।

राधे : (भक्कभोरते हुए) गणपति, ओ गणपति !

गणपति : (कराहते हुए) हायरे मर गया ! पता नहीं क्यों, सारा बदन दर्द कर रहा है । मुझे मत छोड़ो, पंडितजी !

अब्दुल : क्यों, क्या बात है ?

गणपति : आह ! सारी देह टूट रही है ।

राधे : अच्छा, तो पहले उठकर बैठ जाओ । बोलो, तुमने क्या सपना देखा ?

गणपति : आप ही पहले सुनाइये । हाय राम, मैं मर गया !

[उठकर बैठता है ।]

राधे : लो, पहले मैं अपना सपना सुनाता हूं । रात को सोते-सोते जैसे ही एक बजा कि मैंने देखा, यहां से सम्राट विक्रमादित्य महाराज की सवारी निकल रही है । साथ में बढ़िया बाजे-गाजे, ढोल-ढमक्का है । अनगिनत हाथी-घोड़े हैं और बहुत बड़ी फौज ।

गणपति : (अचम्भे से) ऐसी बात ! पर हमारी नींद कमबख्त तब भी न खुली !

राधे : मेरे पास राजदूत आया और बड़े आदर-सत्कार से सिर झुकाकर बोला, श्रीमान पूज्य पंडित राधेश्यामजी महाराज, चलिये, आपको महाराजधिराज विक्रमादित्य महाराज ने बुलाया है । उनके कानों में आपके पूज्य और पवित्र कार्यों की प्रशंसा पहुंची है ।

गणपति : वाह, तब तो ठाठ हो गये पंडितजी आपके !

राधे : अभी आगे सुनो । बीच में मत टोको, मैंने राजदूत से कहा कि मेरे इतने भाग्य कहां ! अधम पापी प्राणी हूं । पर मेरी बात उसने नहीं सुनी । वह मुझे अपने साथ ले गया । वहां मेरे पहुंचते ही महाराज ने आगे बढ़कर मेरा स्वागत किया । मुझे अपने पास बिठाया, फिर मेरे स्वागत में नाच-गाने हुए ।

अब्दुल : वाह, वाह, ! मान गये, कितना हसीन ख्वाब है !

गणपति : हम तो सुनकर पागल हुए जा रहे हैं । अभागों हैं हम, जिन्हें ऐसे सपने नहीं आते ! बड़े ठाठ रहे होंगे आपके तो, पंडितजी !

राधे : छत्तीस प्रकार के भोजन आये, सोमरस आया ।

गणपति : आपने तो खाने से हाथ मुश्किल से ही हटाया होगा, पंडितजी !

राधे : अरे, आगे सुनो । महाराज ने मेरे पुण्य कार्यों की सराहना की और मुझसे दरबार में रहने के लिए बड़ा ही आग्रह

किया ।

गरणपति : तो फिर वहीं रह जाते ! यहां क्यों आ गये ! बड़े भाग्य से ऐसी जगह मिली थी, उसे भी छोड़ आये ।

राधे : पर तुम लोग जो यहीं थे । मैंने कहा—नहीं महाराज, मेरे दो साथी भूखे-प्यासे सो रहे हैं । मुझे जाना ही पड़ेगा । बस, इतना कहते ही नींद खुल गई ।

अब्दुल : अजी, पंडितजी ! आप धर्मावतार हैं । इस धरती पर आपका कोई सानी नहीं ।

गरणपति : भाई, वैसे सपना तो बढ़िया रहा, पर रही पंडितजी की बदकिस्मती ! राजा विक्रमादित्य ज़िंदा नहीं हैं, नहीं तो असल में अपने दरबार में ही बुला लेते ।

अब्दुल : कैसे बुला लेते ?

गरणपति : जब इन्होंने महाराज को देखा है तो उन्होंने भी इन्हें देखा होगा । सुबह उठते ही कहते कि ढूंढ़कर लाओ उस धर्मावतार पंडित को ।

अब्दुल : बात तो ठीक है ।

राधे : छोड़ो भी इस पचड़े को । मौलवीसाहब, अब आप अपना सपना सुनाइये ।

अब्दुल : अच्छा लो, सुनो ! सपने में मैंने क्या देखा कि मैं आसमान में उड़ा जा रहा हूं और उड़ते-उड़ते बड़ी ही खूबसूरत बस्ती में जा पहुंचा हूं । चारों ओर फूलों और फलों के बाग-बगीचे हैं । वैसे तो अब भी समझ में नहीं आ रहा है कि वह कौन-सा मुल्क था, पर मेरा

अन्दाज़ है कि परियों की दुनिया रही होगी ।

गरणपति : अरे वाह, धन्य हो ! आपके भी यह ठाठ, मौलवी-साहब ! हां, फिर क्या हुआ !

अब्दुल : मैंने ऐसा कोई नेक काम अपनी ज़िन्दगी में नहीं किया, जिसके लिए मैं ऐसे हसीन मुल्क में पहुंचता ।

गरणपति : (दबी ज़बान से) सत्य वचन महाराज !

अब्दुल : वहां के बादशाह को खबर हुई कि मौलवी अब्दुल करीम आये हैं । बादशाह ने मुझे बुलाया । वहां जो भी आदमी मुझे देखता, सलाम करता । आखिर मुझे आया देखकर उस नेक बादशाह ने मुझे अपने पास बगल में बिठाया और कहा—“ऐ मौलवी ! तेरे पाक इरादों और नेक कामों की हर जगह तारीफ़ हो रही है ।” फिर हूरों के नाच हुए । मय के दौर चले । कई तरह के ज़ायकेदार खाने आये ।

गरणपति : वाह-वाह, बड़े-बड़े ठाठ रहे ।

राधे : सचमुच बड़ी मौज रही आपकी !

अब्दुल : बादशाह बोले—तुम यहीं रह जाओ ! पर मैंने यही कहा कि मेरे दो साथी धरती पर हैं^१। भूखे सो रहे हैं । नींद खुलने पर देखा कि यहीं हूं ।

राधे : वाह, बहुत बढ़िया सपना रहा आपका ।

गरणपति : हूं ! तो तुम लोगों ने एक से ही सपने देखे । हां भाई, तुम लोग ठहरे धर्मात्मा आदमी । हमें ऐसे सपने कैसे आ सकते हैं !

राधे : अब तुम सुनाओ ।

गणपति : (कराहते हुए) मुझ सपने की याद मत दिलाओ
महाराज ! मेरा सारा शरीर दर्द कर रहा है ।

अब्दुल : क्यों, ऐसी क्या बात है ?

गणपति : मत पूछो महाराज, अपना तो बहुत ही बुरा हाल
रहा । जैसे ही रात का एक बजा...

अब्दुल : तुम्हें कैसे पता चल गया कि रात का एक बजा है ?

गणपति : जैसे आप लोगों को लग गया था ।

राधे : हमने तो अन्दाज़े से समझा ।

गणपति : तो अपना भी अन्दाज़ा ही रहा होगा । अचानक
मेरी पीठ पर ऐसे लगा, पंडितजी, जैसे पहाड़ टूट पड़ा
हो । हड़बड़ाकर जो मैंने आंखें खोलीं तो देखता क्या हूं
साक्षात् घासी नाई का भूत मेरे सामने खड़ा है । मुझे
जगा देख एक लात और मारी मेरी पीठ पर । पंडितजी,
क्या बताऊं मेरी पीठ की क्या हालत हुई । मैंने उसके
आगे हाथ जोड़कर पूछा—मेरे लिए क्या आज्ञा है,
महाराज ? गुस्से से बोला—महाराज का बच्चा !
क्यों बें गणपति, तू भूखा क्यों सो रहा है ? और यह
सोंधी-सोंधी पकवान की सुगन्ध कहां से आ रही है ?
तुम लोग तो जानते ही हो कि सुगन्ध के पाते ही भूत
आ जाते हैं । मैंने सपनेवाली बात बता दी और कहा कि
महाराज, वह पंडितजी और मौलवीसाहब के लिए पकवान
बनाये हैं । साथ ही मेरे चार बाजरे के रोट रक्खे हैं ।

सुनते ही वह बड़े जोर से गरजा, साथ ही एक लात और तानकर मेरी पीठ पर जमाई। फिर कड़ककर बोला—खा सारी खीर, खा सारा हलवा। (सांस भरकर) मैं बड़ी परेशानी में पड़ा।

अब्दुल : (हँसते हुए) फिर क्या हुआ ?

गरणपति : होना क्या था, मौलवीसाहब ! मैंने हिम्मत बांधकर प्रार्थना की—मैं नहीं खाऊंगा, महाराज ! मुझे उन दोनों के शाप का डर है। सुनते ही गुस्से से वह लाल-पीला हो गया। बोला—भाड़ में जायं वे दोनों ! हमारे होते किसकी हिम्मत है, जो तुझे कुछ कह सके। खा यह सब ! मजबूरन मुझे सबकुछ खाना पड़ा। फिर बोला—बाजरे के चारों रोट भी खा। पेट में जगह न होते हुए भी मुझे घे खाने पड़े। बड़ी मुश्किल से सब निबटाया। वह बड़ा प्रसन्न हुआ। बोला—सुन, सुबह होते ही अपने घर चले जाना। होगई सैर। जाकर अपने घर का काम-काज देख। नहीं लौटा तो फिर मुझे आना पड़ेगा। इतना कहकर वह गायब होगया। (सांस भरकर) महाराज, मैं गांव जा रहा हूँ।

राधे : क्या मतलब ?

गरणपति : मतलब यही कि भूत की आज्ञा है। उसे कैसे टाल सकता हूँ ?

अब्दुल : अरे सपनों की बातों पर इतना यकीन कर बैठा !

गरणपति : सपना कौन कहता है, महाराज ! यह तो असली

बात है ।

राधे : (बर्तन देखकर) अरे सचमुच, ये सब खाली हैं ।

अब्दुल : तूने हमें क्यों नहीं जगा लिया ?

गणपति : बहुत जगाया, महाराज ! काफी शोर मचाया, पर मुझ गरीब की सुनता ही कौन था । आप दोनों उस समय राजाओं और बादशाहों के दरबारों में नाच-गाने में मस्त थे । छत्तीस प्रकार के भोजन उड़ा रहे थे । मैं गरीब यहां मार खा रहा था । हाय, हायरे, मेरी बोटी-बोटी दुःख रही है । अच्छा, मैं चलूं ।

राधे : अरे ठहर ! हम भी तेरे साथ चलते हैं ।

गणपति : नहीं महाराज, अकेले जाने का ही हुक्म हुआ है ।

[हँसता हुआ जाता है ।]

राधे : (रोते हुए) अरे, इमने तो हमारे साथ बहुत बुरा किया मौलवीसाहब ! सपने के बहाने सबकुछ खा-पी गया । अब हम क्या करें ?

[पटाक्षेप]

